VISION 2026

BRINGING HELP and HOPE
SOCIETY for BRIGHT FUTURE

APPEAL FOR WINTER RELIEF PROJECT 2021-22

MAKE
A WARM WINTER
FOR POOR & NEEDY

DONATE A BLANKET
₹550

Indian Citizens Can Donate from Their Accounts in India to This Account Donation to Society for Bright Future is eligible for exemption under section 80G of Income Tax Act

DEPOSIT YOUR CONTRIBUTION

Account Name:
Society For Bright Future

Scan to Pay

Current A/C No:	IFSC Code:	Bank:	Branch:
6318812353	IDIB000J029	Indian Bank	Jamia Millia Islamia

(Email us the detail of transaction with postal address) at **accounts@sbfindia.org or Whatapp 7290044603**

BRINGING HELP and HOPE
SOCIETY for BRIGHT FUTURE

SOCIETY FOR BRIGHT FUTURE
E-89, Flat No. 104, Hari Kothi Lane, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi - 110025 (India)
Email: projects@sbfindia.org | Mobile: +91 7290074383 |+91 7290074380

www.kanti.in

संपादक
शिब्ली अरसलान
editorkantimasik@gmail.com

प्रबंधक
नईम ख़ान
+91 9891160829

सहयोग राशि
एक प्रति 30/- रु॰ एक वर्ष 350/- रु॰
दो वर्ष 670/- रु॰ तीन वर्ष 950/- रु॰
चार वर्ष 1200/- रु॰ पांच वर्ष 1400/- रु॰
आजीवन रु॰ 4000/-
सऊदी अरब और खाड़ी के देशों के लिए 110/- रियाल
यूरोप व अमेरिका के लिए 40/- US डॉलर

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए सम्पर्क करें :

कार्यालय :
कान्ति मासिक, डी-314, दावत नगर,
अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर,
ओखला, नई दिल्ली-110025

हेल्पलाइन न॰
+91 8920589292

Account Detail
NAME : KANTI
A/C NO : 0990839195
IFS CODE : IDIB000J029
TYPE : CURRENT
BANK : INDIAN BANK
BRANCH : JAMIA MILLIA ISLAMIA
NEW DELHI - 110025

चेक / ड्राफ्ट 'कान्ति' के नाम से बनवाएं

मुद्रक एवं प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि॰), डी-314 दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नई दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं भारत ऑफ़सेट प्रेस, 2035, क़ासिम जान स्ट्रीट, बल्लीमारान, दिल्ली - 110006 से मुद्रित।
फ़ोन: 9818799223
संपादक: शिब्ली अरसलान

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णतः प्रतिबंधित है।

वर्ष 31 अंक 06 दिसम्बर 2021

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

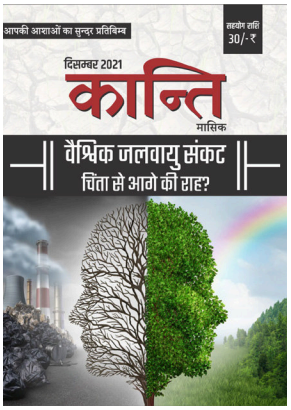

कान्ति मासिक

इस अंक में

मूल प्रश्न 04
आज़ाद और नेहरू की प्रासंगिकता
शिब्ली अर्सलान

चिंतन 07
क्या हो गया है हमारे समाज को?
वारिस हुसैन

सौंदर्य बोध 09
न्याय दर्शन
डॉक्टर अबरार मुल्तानी

मुख्य स्तंभ 11-20
• कॉप-26–वैश्विक जलवायु संकट : चिंताओं से आगे की राह?
जुनैद अली
• जलवायु संकट की चिंताएं और जवाबदेही का दायरा
संपादन प्रभाग
• वर्तमान जलवायु संकट और इस्लामी शिक्षाएं
सुफ़ियान अहमद

विशेष आयोजन 21
प्राचीन भारतीय साहित्य में परदा-प्रथा
डॉ॰ सुरेन्द्र 'अज्ञात'

दर्शन 25
मनुष्य एक नैतिक अस्तित्व
मुत्तलिब मिर्ज़ा

विकल्प 27
बीच का रास्ता: नफ़रत का जवाब होशमंदी
एस॰ अमीनुल हसन

इबारत 29
सेकुलर दौर में धर्म
डॉ॰ अब्दुल रशीद अगवान

सद्भावना 31
सद्भावना का सोशल ऑडिट
रेडियो जॉकी नवेद

ज्वलंत 33
कस्टडी में मौत : पुलित तंत्र की...
संपादन प्रभाग

शिक्षा विमर्श 35
NEET : एक महाकथा की विफलता...
सआदत हुसैन ख़लीफ़ा

लघुकथा 38
फ़साद की फांस
ईश्वर दयाल जायसवाल

कविता 39
मानवता
शमीम अख़्तर

विविधा 40
सम्मान की अनोखी दास्तान

महिला जगत 43
अपनी रचनात्मक क्षमता को निखारें...
फ़ाइज़ा सईद

रोशनी 45
क़ुरआनी दर्शन
डॉ॰ मुहम्मद इक़बाल सिद्दीक़ी

दृष्टिकोण 47
बोया पेड़ बबूल का तो...?
मलिक मोअतसिम ख़ान

आख़िरी पन्ना 49
सफलता की व्यापक अवधारणा
नईम अलहिन्दी

मूल प्रश्न



आज़ाद और नेहरू की प्रासंगिकता



शिब्ली अर्सलान

नवम्बर का महीना आधुनिक भारत की विभूतियों के हवाले की वजह से बेहद ख़ास हो जाता है। 11 नवम्बर को मौलाना आज़ाद पैदा हुए थे और 14 नवम्बर को नेहरू जयंती है। नेहरू और आज़ाद को आज़ाद भारत के पहले प्रधानमंत्री और पहले शिक्षामंत्री की हैसियत से महज़ राजनेता समझना काफ़ी नहीं है। वे आज़ाद भारत या आधुनिक भारत के स्वप्नद्रष्टा और शिल्पकार थे। समाज व राजनीति, आर्थिकी व संस्कृति, शिक्षा और प्रोद्योगिकी यानी जीवन के सारे सामूहिक दायरों से संबंधित विज़न और चिंतन रखते थे!

केवल विज़न और चिंतन ही नहीं, कार्य योजना भी। अपनी कम्युनिटी की बेजा हमदर्दी से ओत प्रोत, भावुक, अतिप्रतिक्रियावादी लोगों को नेहरू और आज़ाद को समझने में हमेशा परेशानी रही है। इतिहास के कबाड़ घर से 'दूर की कौड़ी' टाइप दलील सभी को मिल जाती है। कट्टर हिंदुत्ववादी, नेहरू को 'हुस्न-परस्त' और 'विलासिता-पसंद' कहकर उनके विरुद्ध अनर्गल प्रोपेगेंडा चलाते हैं तो मिल्लत-परस्त मुसलमान आज़ाद को 'कांग्रेस-परस्त' और 'अशराफ़िया' कहकर उनपर 'पसमांदा मुसलमानों के विरोधी' होने का ताना मारते हैं। असल में नेहरू और आज़ाद जैसी विभूतियों को समझने के लिए जिस दार्शनिकता, आउट ऑफ़ बाक्स बौद्धिकता, सौंदर्य बोध, इतिहासबोध, उदारता, इन्टरनेश्नलिज़्म, ज़िंदादिली व सज्जनता आदि की आवश्यक्ता है, उसका अपने यहां घोर अभाव रहा है और मौजूदा राजनीतिक माहौल ने तो पूरा बेड़ा ही ग़र्क कर रखा है...वो नेहरू जिसके बारे में महात्मा गांधी ने ये कहा "उसमें एक स्टेट्समैन की समझदारी भी है। वह एक क्रिस्टल के रूप में शुद्ध है, वह निलंबन से परे सच्चा है"। जिसके देहांत पर अटल बिहारी बाजपेयी जैसे वैचारिक विरोधी ये कह रहे हों-"...शायद तीन मूर्ति (तब नेहरू की रिहाइश, अब नेहरू मीयुज़ियम है) को उन जैसा व्यक्ति कभी भी अपने अस्तित्व से सार्थक नहीं करेगा। वह व्यक्तित्व, वह ज़िंदादिली, विरोधी को भी साथ लेकर चलने की वह भावना, वह सज्जनता, वह महानता शायद निकट भविष्य में देखने को नहीं मिलेगी। मतभेद होते हुए भी उनके महान आदर्शों के प्रति, उनकी प्रामाणिकता के प्रति, उनकी देशभक्ति के प्रति, और उनके अटूट साहस के प्रति हमारे हृदय में आदर के अतिरिक्त और कुछ नहीं है..." वो मौलाना आज़ाद जिन्हें पंडित नेहरू ने 'मीर-ए-कारवां' कहा और उनके देहांत पर यूं कहा 'हमें मौलाना आज़ाद के दिमाग़ की रोशनी से सोचने की आदत हो गई थी" जिसके बारे में महात्मा गांधी ने कहा था कि वो हमारे दर्मियान प्लेटो और अरस्तू की क़ाबलियत के व्यक्ति थे'। वो नेहरू जिसने 14-15 अगस्त 1947 की मध्य रात्रि को पार्लियामेंट के सेंट्रल हाल से दुनिया को अपने ऐतिहासिक संबोधन 'ट्रिस्ट विद डेस्टनी' में नए भारत की खोज की बात कही थी, जहां अधिकार और विशेषाधिकार देने में धर्म व जाति की विभाजन रेखा नहीं होगी। वो नेहरू जिसने केवल नए भारत का सपना नहीं बुना था बल्कि उसके सपनों के संसार में पूरा मानव समुदाय शामिल था,

जिसने सर्व समेटु सम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा बनाए गए चक्रव्यूहों से दुनिया को निजात दिलाने के लिए तीसरे विकल्प 'गुटनिरपेक्ष आंदोलन' की सुनियोजित कोशिश की थी और पूरी इंसानी बिरादरी में अपने इंटरनेशनलिज़्म से आज़ाद भारत का नाम रोशन किया था। वो नेहरू जिसने हिंदुओं को भविष्य में 'बहुसंख्यकवादी अतिवाद' से ख़बरदार किया था। वो नेहरू जिस पर 'लेफ्ट झुकाव' का आरोप लगाया जाता है मगर जिसने भारतीय कॉमुनिस्ट को मौलिक चिंतन से ख़ाली बताकर रद्द किया। वो आज़ाद जिसने 'टू नेशन थ्योरी' के विरुद्ध बार-बार मुसलमानों से कहा कि मुसलमानों को हिन्दू भाइयों के साथ मिलकर एक 'क़ौम' बन जाना चाहिए, जिसने विभाजन के बाद भी भारतीय मुसलमानों को मेन-स्ट्रीम में आकर हिन्दू हम-वतन भाइयों के साथ इंगेज होने की दावत दी, जिसने सामुदायिक राजनीति और मिल्ली पोलिटिकल पार्टी बनने का हर क़ीमत पर विरोध किया.....ज़ाहिर है कि ऐसे 'लीक से हटे हुए ग़ैर-मामूली' व्यक्तित्व को समझने के लिए वर्षों के पूर्वाग्रहों से निकलना आसान नहीं... हम जब आज के समय और नेहरू व आज़ाद के समय का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो सख़्त हैरत होती है कि हर पहलू से आज से कई गुना अधिक चुनौतियों के बावजूद उस वक़्त ऐसी शाख़्सियतें कैसे पैदा हो गई थीं?

हिन्दू-मुस्लिम की सांप्रदायिक विभाजन वाली राजनीति अपने चरम पर थी, सम्प्रदाय की बुनियाद पर एक अलग देश की मांग और बटवारे के बावजूद मौलाना आज़ाद कैसे राष्ट्रीय स्तर के सर्वोच्च नेताओं में शामिल रहे? यही नहीं मौलाना आज़ाद, अपनी धार्मिकता पर किसी क़िस्म के समझौते के बिना एक राष्ट्र की अवधारणा पेश करते रहे। एक उद्धरण देखें-"...भारत की ज़मीं पर जितना बड़ा हिंदू धर्म है, उतना बड़ा ही इस्लाम धर्म भी है। यदि हिंदू धर्म कई हज़ार सालों से यहां के लोगों का धर्म रहा है तो इस्लाम भी यहां एक हज़ार साल से लोगों का धर्म रहा है। जैसे एक हिंदू गर्व के साथ कह सकता है कि वह एक भारतीय है और हिंदू धर्म का अनुसरण करता है, उसी तरह हम भी गर्व से कह सकते हैं कि हम भी भारतीय हैं और इस्लाम का पालन करते हैं। मैं इसे और भी विस्तार में ले जाना चाहता हूं। एक भारतीय ईसाई उतने ही गर्व से यह कहने का हक़दार है कि वह एक भारतीय है और भारत में वह एक धर्म का पालन कर रहा है, जो ईसाई धर्म है।" (ख़ुत्बात-ए-आज़ाद) थोड़े चिंतन-मनन से कुछ रहस्य खुल जाते हैं और आज के लिए भी रहनुमाई का समान मिल जाता है...

1) भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के नेतृत्व का वर्ल्ड व्यु बहुत विशाल था, जिसमें मानव जीवन के सारे पहलू शामिल थे। वो महज़ राजनीतिक स्वराज के लिए नहीं उठे थे, उनके संपूर्ण स्वराज की अवधारणा में पूरा मानव जीवन शामिल था, मौलाना आज़ाद की तरह पंडित नेहरू ने भी शिक्षा, धर्म,दर्शन, नैतिकता, सौंदर्यबोध, आर्ट एवं कल्चर आदि जीवन के सारे राग-रंग पर अपने उत्कृष्ट विचार पेश किये हैं। छोटे-मोटे वैचारिक मतभेद को मनभेद में बदलने अर्थात् संकीर्णता के लिए उनके यहां कोई स्पेस नहीं थी। पंडित नेहरू का फिर वही 'भाग्य के साथ वादा' (tryst with destiny) वाला भाषण याद करें-।' हम छोटी सोच को बढ़ावा नहीं दे सकते, क्योंकि कोई भी देश तब तक महान नहीं बन सकता जब तक उसके लोगों की मानसिकता संकीर्ण है।'

2) राष्ट्रीय एकता उनका मुख्य लक्ष्य था। मौलाना आज़ाद के एक शक्तिशाली भाषण का ये अंश देखें- "आज, अगर एक फ़रिश्ता आसमान की बुलंदियों से उतर आए और क़ुतुबमीनार पर खड़े होकर ये एलान कर दे कि स्वराज 24 घंटे में मिल सकता है, बस शर्त ये है कि हिन्दोस्तान, हिन्दू-मुस्लिम इत्तेहाद से दस्तबरदार हो जाए तो मैं स्वराज से दस्तबरदार हो जाऊंगा मगर इत्तेहाद से दस्तबरदार नहीं हूंगा.. क्योंकि अगर स्वराज मिलने में देर हुई तो ये हिन्दोस्तान का नुक़सान होगा, मगर हिन्दू-मुस्लिम इत्तेहाद जाता रहा तो ये दुनिया-ए-इंसानियत का नुक़्सान है...।"

(ख़ुत्बाते आज़ाद-मालिक राम)

3) राष्ट्रवाद के तोतारटंत के बजाए इन विभूतियों ने मानवीय विकासवाद और मानव मुक्ति और स्वतंत्रता पर ज़ोर दिया. नेहरू के शब्दों में 'भारत की सेवा का मतलब है करोड़ों पीड़ितों की सेवा करना। इसका अर्थ है अज्ञानता और ग़रीबी को मिटाना, बीमारियों और अवसर की असमानता को ख़त्म करना। हमारी पीढ़ी के सबसे महान व्यक्ति की यही इच्छा रही है कि हर आंख से आंसू मिट जाएं। शायद यह हमारे लिए पूरी तरह से संभव न हो पर जब तक लोगों कि आंखों में आंसू हैं और वो पीड़ित हैं तब तक हमारा काम ख़त्म नहीं होगा। और इसलिए हमें मेहनत करना होगा जिससे हम अपने सपनों को साकार कर सकें। ये सपने भारत के लिए हैं, साथ ही पूरे विश्व के लिए भी हैं। आज कोई ख़ुद को बिल्कुल अलग नहीं सोच सकता क्योंकि सभी राष्ट्र और लोग एक दूसरे से बड़ी निकटता से जुड़े हुए हैं। जिस तरह शांति को विभाजित नहीं किया जा सकता, उसी तरह स्वतंत्रता को भी विभाजित नहीं किया जा सकता। इस दुनिया को छोटे-छोटे हिस्सों में नहीं बांटा जा सकता है।" ■■

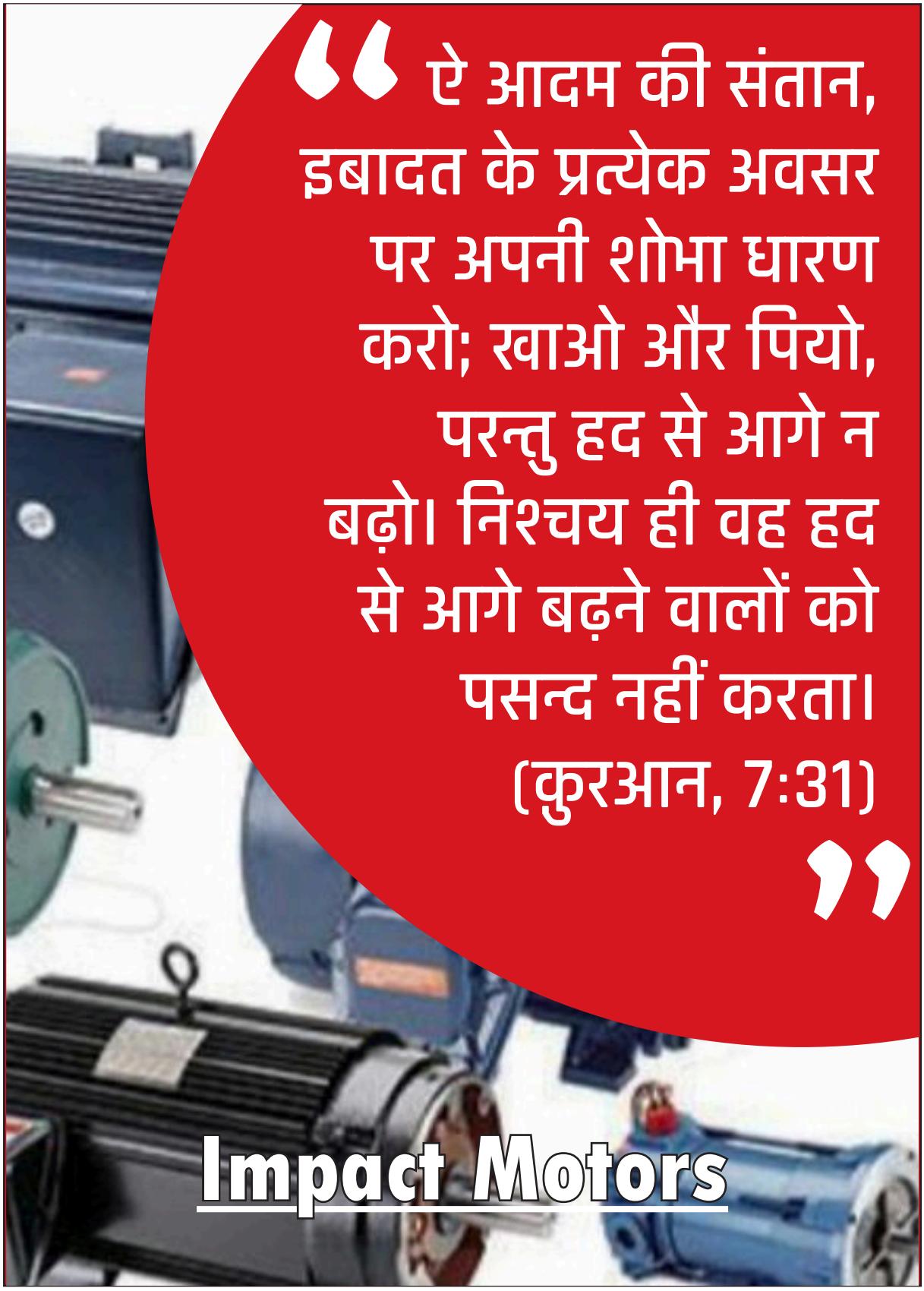
“ऐ आदम की संतान, इबादत के प्रत्येक अवसर पर अपनी शोभा धारण करो; खाओ और पियो, परन्तु हद से आगे न बढ़ो। निश्चय ही वह हद से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता। (कुरआन, 7:31)”
Impact Motors

चिंतन



वारिस हुसैन

क्या हो गया है हमारे समाज को?

अख़बार पढ़ना एक अच्छी आदत है। बचपन से यह आदत ऐसी लगी है कि अभी भी जब तक सुबह अख़बार पढ़ न लूं, चैन नहीं मिलता। पर पिछले कुछ वर्षों से अख़बार पढ़ते हुए उसके पन्नों को तेज़ी से पलटने की ज़रूरत महसूस होती है। हर पृष्ठ बलात्कार, हत्या और एक-दूसरे के शोषण और उत्पीड़न की घटनाओं से भरा होता है जिन्हें पढ़ते हुए बेहद दुःख होता है। कैसा समाज बनकर रह गए हैं हम? क्या हो गया है देश के लोगों को? ऐसा लगता है जैसे नैतिकता का गला घोंट दिया गया हो। इन्हीं समाचारों में यदि कहीं यह समाचार भी सामने आता कि इसको रोकने की लिए आवाज़ें उठ रही हैं, प्रयत्न किए जा रहे हैं, सरकार जागरूक है तो भी संतुष्टि का कारण हो सकता था। पर ऐसा तो कुछ भी होता नज़र नहीं आता। ऐसा लगता है जैसे इस ओर किसी का ध्यान ही नहीं है, न किसी को इसकी चिंता है।

और आज तो उस समय दुःख की कोई सीमा न रही जब आंखों के सामने यह ख़बर गुज़री कि एक राज्य में मंत्री रह चुके एक सज्जन (शायद यह शब्द यहां उचित नहीं है) को बलात्कार के आरोप में आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई है। ऐसा नहीं है कि इस प्रकार की यह पहली ख़बर हो। सत्ता से जुड़े लोगों के अपराधों में लिप्त होने की ख़बरें पहले भी आती रही हैं, पर आज किसी अनजान कारण से इस समाचार ने बहुत दुखी किया। सोचने लगा कि आख़िर सुधार कैसे होगा जब सुधार करने का दावा करने वाले ही समाज की दुर्गति करने पर तुले हों? समाज जिनको अपना आदर्श मानता है, जिनके हाथों में देश का भविष्य सौंपता है, जिनसे आशा रखता है कि वह देश को उन्नति की ओर ले जाएंगे, जब वह स्वयं पतन का शिकार हो जाएं, तो देश का भविष्य उज्जवल कैसे हो सकेगा?

उन्नति मात्र सड़कें, बिल्डिंगें और फैक्ट्रियां बनवाने का नाम नहीं है। ब्रान्डेड कपड़े पहनना, महंगे स्मार्टफोन पर देश-विदेश में बातें करना और शानदार गाड़ियों में सवार हो जाना उन्नति की कोई ठोस पहचान नहीं है। ऊंची-ऊंची डिग्रियां प्राप्त कर लेना और बड़ी-बड़ी मल्टीनेशनल कम्पनियों में नौकरी कर लेने को भी उन्नति की पराकाष्ठा समझना उचित नहीं है। वास्तविक

समाज जिनको अपना आदर्श मानता है, जिनके हाथों में देश का भविष्य सौंपता है, जिनसे आशा रखता है कि वह देश को उन्नति की ओर ले जाएंगे, जब वह स्वयं पतन का शिकार हो जाएं, तो देश का भविष्य उज्जवल कैसे हो सकेगा?

उन्नति तो वह है जहां आदमी के विचारों में उन्नति हो, उसके व्यवहार और आचरण उच्च श्रेणी के बनें, उसके हृदय में दूसरे इंसानों के प्रति आदर के भाव हों और दूसरों के दुखों से उसका हृदय तड़प उठे। जहां अपनी उन्नति के लिए दूसरों को कुचलते हुए आगे बढ़ने के बजाए उनको साथ लेकर चलने की भावना हो। जहां हर किसी की इज़्ज़त-आबरू और जीवन की रक्षा की व्यवस्था हो और जहां किसी का शोषण करने की इच्छा भी कभी दिल में न उठे। जिस समाज में किसी का जीवन सुरक्षित न हो, जहां महिलाओं की आबरू से खेला जाना साधारण बात बन जाए, जहां दूसरों की दौलत हड़पने का हर हथकंडा इस्तेमाल किया जाना सामान्य घटना माना जाने लगे और जहां नैतिकता के बजाए अनैतिकता का राज हो उस समाज को उन्नत समाज कहने से पहले हज़ार बार सोचने की आवश्यकता है। और जब सत्ताधारी लोग ही जनसाधारण का शोषण करने लगें और उन्हें उन्नति के नाम पर घृणा, भेदभाव और स्वार्थ की शिक्षा देने लगें तो समझ लेना चाहिए कि उस समाज में उन्नति की परिभाषा ही उलट गई है।

काश कि हमारे समाज ने हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के इस कथन को समझने का प्रयत्न किया होता कि, 'तुम दूसरों के लिए भी वही पसंद करो जो तुम अपने लिए पसंद करते हो'। या कभी कुरआन के इस सन्देश पर ध्यान दिया होता कि, "ऐ लोगो! हमने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया और तुम्हें बिरादरियों और क़बीलों का रूप दिया, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचानो। वास्तव में अल्लाह के यहां तुममें सबसे अधिक प्रतिष्ठित वह है, जो तुममें सबसे अधिक डर रखता है।"



(क़ुरआन 49:13) समाज में शोषण और उत्पीड़न, अपराध और अन्याय तभी समाप्त हो सकता है जब कोई किसी को छोटा और नीच न समझे और दूसरों को भी वही अधिकार दे जो वह अपने लिए पसंद करता है। हमारा यह जीवन अल्लाह की ओर से प्रदान किया हुआ महानतम उपहार है, इसकी रक्षा का हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए। दूसरों का तो दूर, इस्लाम तो स्वयं अपना जीवन समाप्त करने को निषेध करता और इसे घोर पाप की संज्ञा देता है।

समाज को उच्च आदर्श और नैतिकता पर स्थापित रखने का एक अचूक नुस्ख़ा हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) इंसानियत को दे गए हैं कि, 'अपने भाई की सहायता करो चाहे वह उत्पीड़ित हो या उत्पीड़क'। जब लोगों ने जानना चाहा कि उत्पीड़ित की सहायता तो समझ में आई, पर उत्पीड़क की सहायता से क्या तात्पर्य है, तो आपने समझाया कि अपने भाई को दूसरों का उत्पीड़न करने से रोक लेना ही उसकी सहायता है।

संसार में एक सुखी जीवन व्यतीत करने के लिए भौतिक उन्नति की आवश्यकता से इन्कार नहीं, पर इससे पहले नैतिक उन्नति आवश्यक है। बिल्डिंगें छोटी भी हों तो उनमें रहा जा सकता है, गाड़ी थोड़ी पुरानी हो तो भी उसका उपयोग किया जा सकता है और मोबाइल सस्ता भी हो तो उससे बात की जा सकती है, पर जब हर समय जीवन और इज़्ज़त-आबरू दांव पर लगी हो तो असंख्य और असीमित भौतिक साधन भी संतोष प्रदान करने में असफ़ल रहते हैं। यही कारण है कि इस्लाम इंसान के विचारों को सही दिशा देने और उसको नैतिक रूप से उच्चतम स्तर पर ले जाने पर सबसे अधिक ज़ोर देता है। कुरआन का एक हल्का-सा अध्ययन इस बात को पूरी तरह स्पष्ट कर देता है कि संसार में सुख-सम्पन्नता के सारे साधन बने तो इंसानों के लिए ही हैं, पर यह इंसान के जीवन का लक्ष्य नहीं हो सकते। उसका लक्ष्य तो अपने मालिक और रचयिता अल्लाह को राज़ी करना है, न कि धन-दौलत और ऐश्वर्य के पीछे अपने जीवन को व्यय कर देना। काश कि हमारा समाज इस सत्य को जानने का प्रयत्न करता।■■(warishusain@gmail.com)

सौंदर्य बोध



डॉक्टर अबरार मुल्तानी

न्याय दर्शन

न्याय और अन्याय दोनों ही लोगों के भावी व्यवहार को प्रभावित करते हैं, लेकिन इन दोनों का प्रभाव लोगों के व्यवहार पर एकदम विपरीत होगा। समाज का निर्माण मूलतः हमारे द्वारा किए गए न्याय और अन्याय पर ही निर्भर है। एक सभ्य समाज न्याय आधारित होता है और एक असभ्य समाज के लिए अन्याय ही अन्याय की ज़रूरत होती है।

दार्शनिक जॉन रॉल्स ने न्याय पूर्ण समाज बनाने के लिए एक कल्पना की थी। उन्होंने कल्पना की-'एक सम्मानीय काउंसिल का गठन किया जाए। जिसका काम भविष्य के समाज के लिए क़ानून बनाना हो। वे इस बात के लिए बाध्य हो कि हर छोटे से छोटे विवरण पर पूरी तरह विचार करेंगे। और जैसे ही वे अंतिम सहमति पर पहुंचेंगे, हर एक सदस्य जैसे ही क़ानूनों पर दस्तख़त कर देगा, वे सब मर जाएंगे। किंतु वे तुरंत ही उस समाज में फिर जी उठेंगे जिसके लिए उन्होंने क़ानून बनाए थे। ख़ास बात यह होगी कि उन्हें नहीं मालूम होगा कि समाज में वे क्या होंगे। स्त्री, पुरुष, बच्चा, शासक या फिर एक आमजन। ऐसे लोगों द्वारा बनाया गया क़ानून एक न्यायपूर्ण समाज का निर्माण करेगा।'

दुनिया के कई लोगों का मानना है कि न्यायपूर्ण समाज की स्थापना ईश्वर के दिए गए क़ानून या उसकी किताब के अनुसार चलने पर ही संभव है। धर्म ही लोगों के बीच न्याय कर सकता है। लेकिन यह सब संभावनाएं तभी हैं जब मनुष्यों का समाज न्याय करना चाहे। अगर वह अन्याय पर ही उतारू है तो फिर अच्छे से अच्छा क़ानून या फिर दिव्य पुस्तकों में लिखें क़ानून भी न्याय नहीं कर सकते। न्याय के साथ समाज में शांति आती है और अन्याय के साथ अशांति। जो समाज चाहते हैं कि उनमें शांति बनी रहे उन्हें न्याय का दामन थाम लेना चाहिए और अन्याय से तौबा कर लेनी चाहिए।



असभ्य या बर्बर समाज न्याय को कुचलकर अन्याय के दम पर आगे बढ़ना चाहते हैं। लोगों पर शासन करने के लिए उन्हें संगठित करने के साथ-साथ अनुशासित भी करना होता है। यदि संगठित लोग अनुशासित नहीं किए गए तो फिर वे भस्मासुर बन जाते हैं और अपने ही समाज को भस्म कर देते हैं। लोगों को अनुशासित न्याय की अवधारणा बनाती है। अगर संगठित लोगों के बीच यह धारणा बन जाए कि, 'न्याय होने का कोई भरोसा नहीं है तो वे स्वयं ही न्यायाधीश बन बैठते हैं। फिर शुरू हो जाता है बर्बरता का एक डरावना और विभत्स दौर। अनंत उदाहरण इतिहास की पोथियों में भरे पड़े हैं।

■■

"तुम स्वर्ग में प्रवेश नहीं कर सकते जब तक कि मोमिन नहीं बनते, और तुम मोमिन नहीं बन सकते जब तक कि परस्पर एक-दूसरे से प्रेम न करो। क्या मैं तुम्हें वह कर्म न बताऊँ जिसको तुम करो तो तुम परस्पर एक-दूसरे से प्रेम करने लगोगे। वह यह कि आपस में सलाम को रिवाज दो।"

(हदीस : मुस्लिम)



S. Z. Ahmad Hospital

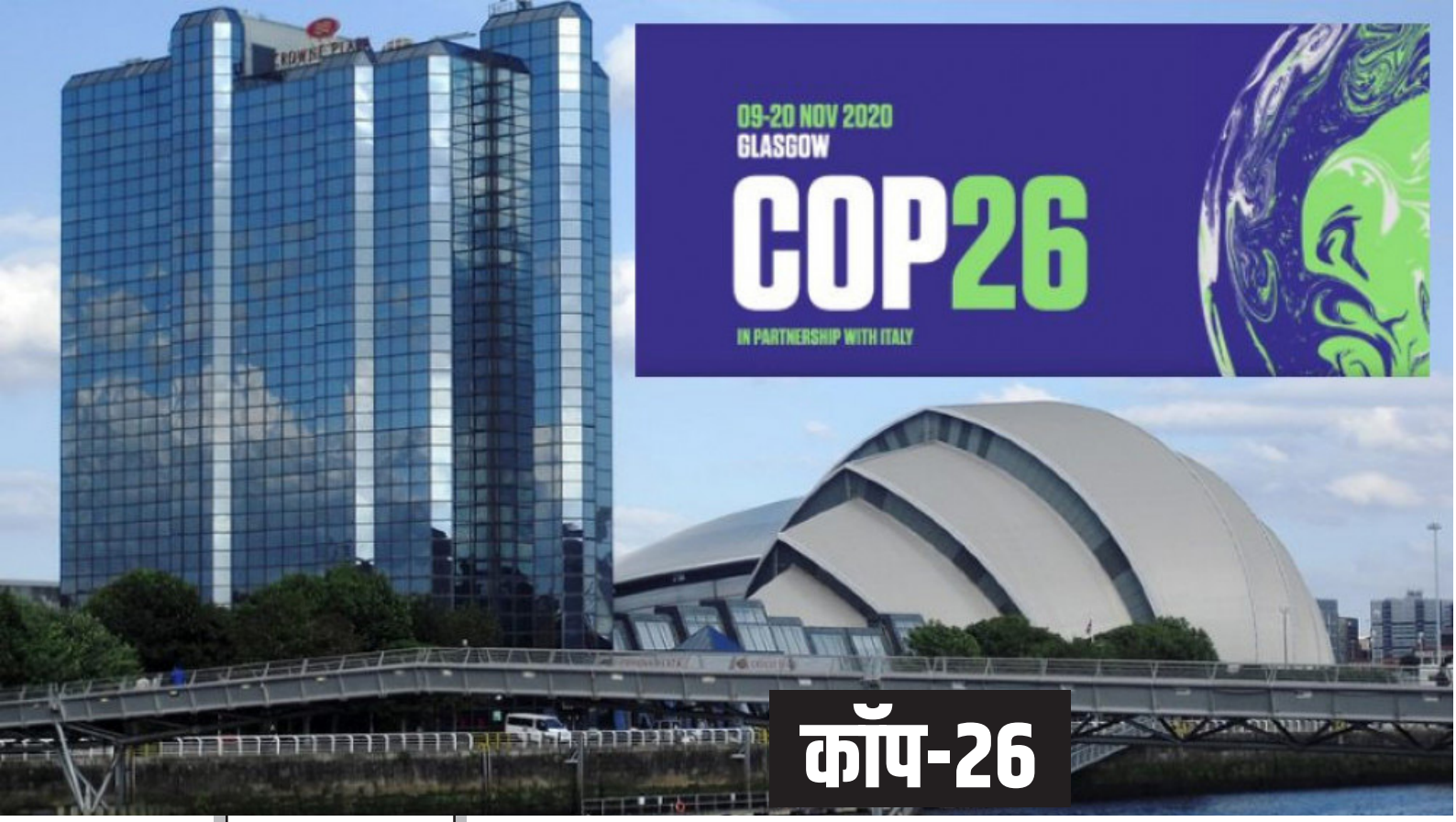

कॉप-26

मुख्य स्तम्भ



जुनैद अली

वैश्विक जलवायु संकट : चिंताओं से आगे की राह?

मानव जीवन के अस्तित्व और जलवायु में इतना अधिक घनिष्ठ संबंध है कि थोड़ी सी उथल-पुथल भी बड़े पैमाने पर गंभीर बदलाव लाने में सक्षम है। प्राकृतिक एक निश्चित स्तर तक अपने आपको चक्रण के माध्यम से सुरक्षित बनाएं रखने में सक्षम है, लेकिन मानवों के असीमित और सीमाओं को लांघने वाले क्रियाकलाप प्राकृतिक कार्यप्रणालियों पर अनाश्यकता भार डाल रहे हैं, जिसे सहन करना उसकी सीमाओं से बाहर है। इसका नतीजा यह हुआ कि प्रदूषण के कई स्तर सामने आए और धरती के तापमान में वृद्धि दर्ज होने के साथ जलवायु परिवर्तन में तेज़ी देखी जा रही है, जोकि एक बुरा संकेत है।

वैश्विक आंकड़े यह साबित करते हैं कि पृथ्वी के औसत तापमान में लगातार वृद्धि दर्ज हो रही है। औद्योगिक क्रांति की शुरुआत से मौजूदा समय तक पृथ्वी की सतह का तापमान लगभग 1.1 डिग्री सेल्सियस बढ़ गया है। पृथ्वी की सतह के बढ़ते तापमान के प्रभाव से जहां हिमखंडों का पिघलना तेज़ हुआ है वहीं समुद्र के जल स्तर में भी लगातार बढ़ोतरी दर्ज हो रही है। तटीय इलाक़ों पर इसका विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अब जलवायु परिवर्तन दुनिया के देशों के सामने गंभीर चुनौती बन चुकी है और दुनिया की आबोहवा इन्सानों की बेलगाम करतूतों के कारण उस चरम सीमा तक पहुंच चुकी है कि अब इस बिगाड़ का बदस्तूर जारी रहने का



बिलकुल सीधा अर्थ यही होगा कि पृथ्वी पर जीवन की अनूकूलता बहुत ही सीमित हो सकती है और भविष्य विनाशकारी बन सकता है।

पृथ्वी के बढ़ते तापमान के पीछे मुख्य कारण ग्रीन हाउस गैसों का प्रभाव ही रहा है और इनमें मुख्य रूप से कार्बनडाइऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, हाइड्रोफ्लूरोकार्बन, परफ्लूरोकार्बन, सल्फर हेक्साफ्लोराइड गैसे शामिल रहीं हैं। ग्रीन हाउस गैसों की अत्यधिक मात्रा हानिकारक इसलिए होती है, क्योंकि जब वातावरण में इन सभी गैसों का आवरण मोटा हो जाता है तो सूर्य की किरणों के माध्यम से आई उष्मा को आवश्यक मात्रा से कहीं अधिक गैसों की परतें रोक लेती हैं, जिससे पृथ्वी का तापमान बढ़ने लगता है। औद्योगिक क्रांति के बाद से जीवाश्म ईंधनों यानी कोयला और पेट्रोलियम पदार्थों के इस्तेमाल में लगातार वृद्धि देखी गई, जिसके कारण भारी मात्रा में ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन हो रहा है। वातावरण में प्राकृतिक रूप से जितनी मात्रा में उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैसों को सोखने की क्षमता है उसकी तुलना में कई गुना ज़्यादा गैसों का उत्सर्जन होना वातावरण के संतुलन को गंभीर क्षति पहुंचा रहा है।

हाल के कुछ वर्षों में दुनिया के विभिन्न भू-भागों में गर्मी में बेतहाशा वृद्धि, जंगलों में भीषण आग, बाढ़ का प्रकोप, सूखा, तूफ़ान, शीत लहरों में अप्रत्याशित तीव्रता और टिड्डियों द्वारा मचाई गई तबाही के हालात पर मौसम के जानकारों की राय यही है कि यह कोई सामान्य घटनाएं नहीं हैं बल्कि आबोहवा के बिगड़ते मिज़ाज की ही स्पष्ट चेतावनी है, जिसे अब नज़रंदाज़ करने का मतलब भविष्य में कहीं अधिक बड़ी तबाही को दावत देना ही होगा। संयुक्त राष्ट्र की एक संस्था 'इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज' (आईपीसीसी) जिसे जलवायु में होने वाले परिवर्तन का आंकलन करने के लिए वर्ष 1988 में स्थापित किया गया था हाल में ही उसने एक रिपोर्ट जारी कर स्पष्ट किया है कि यदि तत्काल ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन पर लगाम नहीं लगाया गया तो इसके भीषण परिणाम भुगतने होंगे।

इस सदी की शुरुआत से ही जलवायु में होने वाले परिवर्तनों को अत्यधिक घातक माना जाने लगा था और प्रदूषणों को नियंत्रित करने की सुगबुगाहट होने लगी थी। वर्ष 1992 में रियोडी जेनेरियो में हुऐ पृथ्वी सम्मेलन के मौक़े पर पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (यूएनसीईडी) में 'दी यूनाइटेड नेशन्स फ्रेमवर्क कंर्वेशन ऑन क्लाइमेट चेंज' (यूएनएफसीसी)

नामक एक अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय संधि की गई थी, जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को नियंत्रित करते हुए वैश्विक तापवृद्धि में कमी लाना रहा है। 'यूएनएफसीसी' संधि पर हस्ताक्षर करने वाले देशों की पहली बैठक वर्ष 1995 में बर्लिन में आयोजित की गई। इस सम्मेलन को 'कॉप' यानि कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज' कहा जाता है और इसका आयोजन प्रत्येक वर्ष होता है। अभी हाल में 'कॉप26' सम्मेलन का आयोजन ब्रिटेन के ग्लासगो शहर में हुआ, जिसमें अमेरिका के राष्ट्रपति बाइडेन, फ्रांस के राष्ट्रपति मैक्रो, भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी समेत दुनिया भर के 200 देशों के प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया।

कॉप का मुख्य उद्देश्य यही है कि दुनिया के सभी देश अपनी नीतियों के ज़रिये 'नेट ज़ीरो उत्सर्जन' के स्तर पर पहुंचे। 'नेट जीरो उत्सर्जन' का आशय यह है कि कोई भी देश अपनी औद्योगिक तथा अन्य गतिविधियों के ज़रिये उतना ही ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन करे जितना की प्रकृति द्वारा उसे सोखा जा सके। दुनियाभर के देशों के सामने नेट ज़ीरो उत्सर्जन का सवाल कोई छोटा सवाल नहीं है। यह सवाल अपने आप में इतना बड़ा है कि किसी भी विकासशील देश के लिए विकास के पथ पर आगे बढ़ने या विकसित बनने की उसकी आशाओं पर ग्रहण लग सकता है, क्योंकि वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जीवाश्म ईंधनों के उपयोग की दर ही विकास की सूचक है और औद्योगिक विकास पूरी तरह से जीवाश्म ईंधनों पर आश्रित है। हालांकि दुनिया के विभिन्न देशों ने यह संकल्प लिया है कि जीवाश्म ईंधनों की खपत को नियंत्रित करते हुए ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को सीमित करते हुए पृथ्वी के तापमान को कम करने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देंगे।

इससे पहले पेरिस में हुए जलवायु समझौते के तहत वैश्विक स्तर पर यह साझा समझ विकसित की गई थी कि धरती के तापमान को औद्योगिक क्रांति के शुरुआती स्तर से 1.5-2.0 डिग्री सीमा से आगे बढ़ने नहीं देंगे, लेकिन ज़्यादातर देश इस वादे पर खरे नहीं उतरे और अमीर देशों का रवैया धोखाधडी वाला रहा है।

अभी तक 'यूएनएफसीसी' संधि पर हस्ताक्षरित करने वाले देशों ने जलवायु परिवर्तन में सुधार संबंधित मामलों में संकल्प के साथ नीतिगत आधार पर खाका पेश ज़रूर किया है, लेकिन अपनी ओर से पेश की गई नितियों पर वे कितनी ईमानदारी बरतेंगे यह अपने आप में गंभीर सवाल है। अभी तक जो रूझान मिल रहें हैं वे अपने आप में बहुत स्पष्ट नहीं हैं, चिंताएं तो शीर्ष स्तर पर प्रकट की गईं, लेकिन क़वायदों पर ज़ोर बहुत ही कम दिखा, बल्कि टालमटोल के प्रयास अधिक दिखे। अमेरिका, ब्रिटेन, यूरोपीय संघ और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों ने 2050 तक कार्बन उत्सर्जन को पूरी तरह ख़त्म कर देने का लक्ष्य तय किया है, जबकि चीन और सऊदी अरब ने वर्ष 2060 तक शून्य कार्बन उत्सर्जन स्तर पर पहुंचने की बात कही है।

भारत ने भी वर्ष 2070 तक नेट ज़ीरो उत्सर्जन के स्तर तक पहुंचने का वादा किया है, लेकिन भारत ने यह स्पष्ट कर दिया है कि जीवाश्म ईंधनों पर अपनी निर्भरता बनाए रखना चाहता है, क्योंकि ऊर्जा के मामलों में जीवाश्म ईंधनों पर भारत की निर्भरता लगभग 70 प्रतिशत है, जिसे निकट भविष्य में अनूकूलित स्तर पर लाना काफ़ी मुश्किल है।

अभी तक कॉप के दो दशक से भी अधिक के सफर को देखा जाए तो निश्चित रूप से इसका प्रयास महत्वपूर्ण रहा है, लेकिन दुनिया के देशों के बीच उस सेतु के निर्माण में इसकी पहल अभी तक बहुत प्रभावी नहीं दिखी, जिसके आधार पर एक साझा रणनीति के तहत् जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध कोई सशक्त मोर्चाबंदी की जा सके। जलवायु परिवर्तन की रफ़्तार जहां लगातार ज़ोर पकड़ रही हैं वहीं इसके बरक्स कॉप की पूरी कार्यवाही बहुत सुस्त और सीमित ही रही है। अभी तक कॉप का पूरा अभियान सिर्फ़ कागजों तक सीमित और वादों का पुलिंदा ही रहा है।

यह अत्यंत खेदजनक स्थिति रही है कि 'यूएनएफसीसी' संधि पर हस्ताक्षर कर चुके देश 26 वर्षों के बाद भी किसी ठोस नतीजे पर नहीं पहुंच सके। जलवायु परिवर्तन से मुक़ाबला करने के लिए भले ही कई देशों ने संकल्प लेते हुए नेट ज़ीरो कार्बन उत्सर्जन को लेकर समय सीमा निर्धारित की है, लेकिन सामूहिक रूप से दुनिया के देशों ने ऐसा कोई रूझान नहीं प्रकट किया, जिसके आधार पर वादों को अमलीजामा पहनाने के लिए वास्तविक तौर पर पर कोई मज़बूत स्थिति बनती दिखाई देती हो।

सबसे गंभीर पक्ष यही रहा है कि दुनिया के सबसे बड़े कार्बन उत्सर्जक देश जीवाश्म ईंधनों का उपयोग रोकने के मामले में किसी भरोसेमंद स्थिति पर नहीं पहुंच सके। अधिकांश अनुसंधान संस्थानों का मानना यही है कि विश्व के देशों ने जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध जो अपनी प्रतिबद्धता ज़ाहिर की भी है वो अपने आपको अलग-थलग होने से बचाने के दबाव के नतीजे में है, जबकि उनकी पूरी कोशिश ज़मीनी हक़ीक़त से बहुत दूर है।

जलवायु परिवर्तन पर शोध करने

वाले अधिकांश जानकारों का मानना है कि जलवायु बिगाड़ की मौजूदा रफ़्तार धरती को इस सदी के अंत तक 2.4 डिग्री सेल्सियस (4.3 डिग्री फारेनहाइट) तक गर्म कर सकती है। यह स्थिति पूरी दुनिया के लिए अत्यंत गंभीर होगी और कुछ छोटे तथा मझोले आकार के देशों के लिए भारी विनाशकारी और आत्मघात के समान हो सकती है।

26वें कॉप के आयोजन के साथ जलवायु परिवर्तन पर शोध से जुड़े दुनिया के विभिन्न हिस्सों के पर्यावरणविदों बिगड़ते हालात पर दुनिया को चेताते हुए स्पष्ट कर दिया है कि अब किंतु-परंतु की कोई गुंजाइश बाक़ी नहीं रही है और अब प्रदूषण का स्तर गले तक पहुंच गया है। बेलगाम रफ़्तार से भागते प्रदूषण का स्तर तभी नियंत्रित किया जा सकता है जब दुनिया के सभी देश मिलकर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में गिरावट लाते हुए हानिकारक गैसों के उत्सर्जन को 45-50 प्रतिशत कम करते हुए वर्ष 2030 तक वर्ष 2010 के स्तर से नीचे लाए और वर्ष 2050 तक अपने आप को उत्सर्जन के मामले में न्यूट्रल बनाएं, यानी अब सिर्फ़ वादों की फुलझड़ी नहीं बल्कि ठोस और प्रभावी पहल सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

कॉप के ग्लासगो में आयोजित कार्यक्रम में दुनिया के देशों के प्रतिनिधियों के द्वारा 2040-50-60-70 के दशक के अंतराल की कुछ गिनतियां ज़रुर सामने आईं लेकिन इन संकल्पों और प्रतिज्ञाओं की हैसियत रस्म अदायगी से कुछ अधिक होगी? इस पर एक नहीं बल्कि ढेरों सवाल हैं। अपेक्षाएं प्रभावी पहल सुनिश्चित करने की थीं, लेकिन लगभग सभी देश वर्ष 2030 यानी चालू दशक के दौरान ग्रीन हाउस गैसों में किसी भी प्रकार से कटौती की ओर नहीं बढ़ रहें हैं बल्कि बहुत ही दृढ़ता के साथ यह कह रहें हैं कि अभी वे जमकर जीवाश्म ईंधनों का उपयोग करेंगे। वर्ष 2030 तक उनका कार्बन उत्सर्जन का स्तर अपने चरम सीमा तक पहुंच सकता है, जबकि मौजूदा स्थिति यह है कि ख़तरे का निशान लाल हो चुका है।

ग्लासगो में चले लगभग दो सप्ताह की माथापच्ची के बाद भी स्थितियां अपने आप में बहुत स्पष्ट नहीं है। यदि 26वें कॉप के उपलब्धियों की बातें करें तो वो भी काफ़ी विरोधाभासों से भरा



हुआ और अविश्वसनीय प्रतीत होता है। एक चौंकाने वाली घोषणा के ज़रिये अमेरिका और चीन ने एक समझौते के तहत मौजूदा दशक में वैश्विक तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक रोकने के लिए साझा प्रयास करने की मंशा जताई है। जबकि यह दोनों देश वैश्विक उत्सर्जन के लगभग एक चौथाई हिस्से के लिए ज़िम्मेदार हैं और जहां चीन कार्बन उत्सर्जन के पहले पायदान पर है वहीं अमेरिका दूसरे। यदि यह दोनों देश अपनी घोषणा पर स्थिर रहें तो जलवायु समस्या का एक निश्चित समाधान मिल सकता है, क्योंकि यह दोनों देश कोयले और क्रूड ऑयल के सबसे बड़े उपभोक्ता रहें हैं, लेकिन इन दोनो देशों के वादों को खोखला साबित करने के लिए इतना काफ़ी है कि दोनों देशों ने आगामी दो दशकों तक कोयले तथा हाइड्रोकार्बन का उपयोग छोड़ने से साफ़तौर से इन्कार कर दिया हैं, बल्कि उसे चरम पर ले जाने का संकेत दे रहें हैं।

एक अन्य समझौते में दुनिया के क़रीब 100 देशों ने वर्ष 2030 तक वनों की कटाई रोकने और वृक्षारोपण में वृद्धि का वादा किया है। इस मसौदे पर रज़ामंदी जताने वालों देशों में ब्राजील का भी नाम शुमार है, जिसने कुछ समय पूर्व में वैश्विक राय को दरकिनार करते हुए दुनिया का फेफड़ा समझें जाने वाले अमेजन के जंगल पर कुल्हाड़ी चलाने से परहेज़ नहीं किया था।

कॉप की नीरस पटकथा में यह आंशिक सफलता का एक पक्ष ज़रुर देखा जा सकता है कि इसकी कोशिशों के आधार पर ग्लासगो सम्मेलन की दौड़ तक वैश्विक उत्सर्जन का लगभग 90 प्रतिशत क्षेत्रों ने अब अपना नेट ज़ीरो उत्सर्जन लक्ष्य निर्धारित कर लिया है, लेकिन इसमें भी कई देशों का घालमेल यह है कि उन्होंने कार्बन उत्सर्जन पर ज़रुर फोकस किया, लेकिन मिथेन तथा अन्य ग्रीनहाउस गैसों पर अपनी स्थिति स्पष्ट करने से कन्नी काट गए।

कुल मिलाकर यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि दुनिया का बड़ा बहुमत जलवायु परिवर्तन जैसे गंभीर मुद्दे के प्रति न्याय करने की नहीं है बल्कि अब तक उनकी पूरी कोशिश असंगत और भ्रमित करने वाली रही हैं। मौसमों पर निगाह रखने वाली संस्थान 'क्लाइमेट एक्शन ट्रैकर (सीएटी)' ने अपने अनुसंधान के हवाले से कहा है कि वर्ष 2030 तक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कटौती के लिए कॉप-26 सम्मेलन में

भाग लेने वाले देशों द्वारा किए गए वादे जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध पर्याप्त नहीं है और उनकी नितियां अभी भी पृथ्वी को सदी के अंत तक 1.5 सेल्सियस (2.7 एफ) की संयुक्त राष्ट्र के लक्ष्य की सीमा से अधिक गर्म करने की अनुमति देंगे।

कॉप यह भी बताने में असफल रहा है कि जलवायु परिवर्तन के मामले में किस देश की कितनी आपराधिक छवि है। कॉप की पूरी कोशिशें इस लिहाज से बेमानी लगने लगती हैं कि विकासशील देशों और उन विकसित देशों को एक ही पलड़े में तौलते हुए सभी के लिए समान लक्ष्य निर्धारण करने का प्रयास किया जिनकी जलवायु संकट को हवा देने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है और जिसका ख़ामियाज़ा छोटे तथा कम आय वाले देश भुगत रहें। जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता ख़त्म करते हुए तेज़ी के साथ अक्षय ऊर्जा की ओर क़दम बढ़ाने के लिए ख़रबों डॉलर निवेश की आवश्यकता होगी और यह तभी संभव हो सकता है जब विकसित देशों के द्वारा बड़ी धनराशि विकासशील देशों को बतौर अनुदान दी जाएगी। इस आधार पर ही विकासशील देशों को जीवाश्म ईंधनों के उपयोग से रोका जा सकता है।



यही सहायक भावना ही जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध एकजुटता का प्रतीक होगा जिसके आधार पर जलवायु परिवर्तन को सीमित किया जा सकता है, लेकिन दुनिया के गरीब देशों को जलवायु परिवर्तन से लड़ने के लिए अमीर देशों से जो आर्थिक सहायता मिलनी चाहिए थी अभी तक उसकी स्थिति बहुत स्पष्ट नहीं है और पूर्व में जो कुछ वादे किए भी गये थे वे अब धोखे में तब्दील होते दिख रहें हैं। दुनिया के अमीर और ग़रीब देशों के बीच क्लाइमेट फाइनेंस के मुद्दे पर लगातार विवाद की स्थिति बनी हुई है, क्योंकि अमीर विकसित देश अपनी ज़िम्मेदारियों से भाग रहें हैं जबकि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिसका ख़ामियाज़ा ग़रीब देश भुगत रहें हैं।

ग्लासगो सम्मेलन में यह भी एक अप्रत्याशित स्थिति रही है कि दुनिया के देशों के प्रतिनिधियों के बीच जीवाश्म ईंधनों के ख़रीद-फ़रोख्त से जुड़े प्रतिनिधियों की भी बड़ी संख्या में मौजूदगी रही, जिनका काम जीवाश्म ईंधनों के उपभोग की भरपूर वकालत करना रहा है। पर्यावरणविदों का तो यह मानना रहा है कि यदि कॉप जलवायु परिवर्तन के मामले में गंभीर है तो उसे चाहिए कि वह अपनी बैठकों में से जीवाश्म ईंधनों के लॉबिस्टों को बाहर रखे, क्योंकि जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध मुक़ाबले में पूंजीपतियों का दख़ल भी बड़ा रोड़ा रहा है जिसने अपने निजी लाभ के चलते वैश्विक स्तर पर ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती संबंधी योजनाओं को प्रभावी रूप से लागू होने नहीं दिया।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह बिलकुल स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए क्या करना चाहिए, लेकिन यह अत्यंत खेदजनक स्थिति रही है कि जहां उन्नत हथियारों की होड़ में ख़रबों डॉलर फूंके जा रहें हैं वहीं अक्षय ऊर्जा के विस्तार में निवेश कम हो रहा है। जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध वैश्विक जागरूकता का स्तर अभी भी सीमित ही है। वैश्विक स्तर पर इसके विरुद्ध आवाज़ उतनी मुखर नहीं रही है जितनी की होनी चाहिए। हालांकि ग्रेटा थनबर्ग और कुछ युवाओं की टोलियों ने जलवायु परिवर्तन से जुड़े मुद्दों पर अपनी सशक्त उपस्थिति ज़रुर दर्ज कराई है, लेकिन वयस्कों का बहुमत इस गंभीर मुद्दे के प्रति बेज़ार ही रहा है। राष्ट्रों के निति निर्माता उन बहसों में उलझे रहें हैं जो जलवायु परिवर्तन से सीधी लड़ाई के बजाए भटकाने वाली अधिक रही हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जलवायु परिवर्तन के विरुद्ध सशक्त मोर्चाबंदी की अपनी एक क़ीमत है। दुनिया के सभी देशों को अपने वास्तविक कर्तव्यों का संज्ञान में लेते हुए एकजुटता के साथ ठोस प्रयास करने होंगे। इन्सानों की ओर से जब तक प्रकृति के और उसके संसाधनों से छेड़छाड़ को सीमित नहीं किया जाएगा तब तक किसी आमूलचूल परिवर्तन की आस बेमानी है। ■■

मुख्य स्तम्भ



संपादन प्रभाग

जलवायु संकट की चिंताएं और जवाबदेही का दायरा

इसमें कोई दो राय नहीं कि धरती का पर्यावरण लगातार बिगड़ रहा है। वैज्ञानिक और पर्यावरणविद लगातार यह चेतावनी दे रहे हैं कि आने वाले दशकों में वैश्विक तापमान और बढ़ेगा। इसलिए दुनिया अगर अब भी नहीं संभली तो धरती को भयानक आपदाओं से बचा पाना लगभग असंभव हो जाएगा। इस विनाशकारी समस्या के समाधान के उद्देश्य से हाल में ही अंतर्राष्ट्रीय जलवायु शिखर सम्मलेन (सीओपी-26) संपन्न हुआ। इस शिखर सम्मेलन के उदघाटन भाषण में 120 से ज़्यादा देशों के नेताओं को संबोधित करते हुए संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरस ने कहा कि गर्म हो रहे ग्रह के प्रभाव 'समुद्र की गहराइयों से लेकर पहाड़ों की चोटियों तक' महसूस किए जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि हम अपनी क़ब्र ख़ुद खोद रहे हैं।

पर्यावरण बचाने के लिए हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी दुनिया के तमाम छोटे-बड़े देशों के राजनेता ब्रिटेन के ग्लासगो शहर में एकत्रित हुए। हर बार की तरह इस बार भी सम्मेलन में सभी देशों ने इस मुद्दे पर गहन चर्चा की और विनाशकारी कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लक्ष्य को हासिल करने के प्रति अपनी प्रतिबद्धताएं दोहराईं, लेकिन कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लिए सबसे अधिक ज़िम्मेदारी किसकी होनी



चाहिए? इस सवाल पर लंबे समय से मतभेद रहा है और यह मतभेद इस साल भी उभरकर सामने आया।

बाइडन ने अमेरिका को एक नेता के रूप में पेश करने की कोशिश की और उसके सहयोगियों ने अंतर्राष्ट्रीय जलवायु बहस को चीन की ओर मोड़ना चाहा। रूस और चीन के नेताओं की इस सम्मेलन में अनुपस्थिति ने इस बात पर संदेह पैदा किया कि इस संघर्ष में दुनिया कितनी एकजुट हो सकती है। धरती को पर्यावरण संकट से बचाने के प्रयासों में सबसे बड़ी मुश्किल यह रही है कि दुनिया के विकसित देश अपनी ज़िम्मेदारियों से पीछे हटते रहे हैं और कार्बन उत्सर्जन के लिए विकासशील देशों को ज़िम्मेदार ठहराते रहे हैं। शायद इसी लिए ऐसे सम्मेलनों का मक़सद पूरा नहीं हो पा रहा है और दुनिया के ताक़तवर और अमीर देश सम्मेलनों से आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं। तीन दशकों से जलवायु परिवर्तन के मसले पर बातचीत हो रही है, लेकिन बेईमानी और ग़लतबयानी के कारण ही कोई ठोस क़दम नहीं उठाया जा सका।

पर्यावरण की समस्या के मुद्दे पर ग्लासगो जैसी ही हलचन वर्ष 1997 में क्योटो, वर्ष 2009 में कोपेनहेगन और वर्ष 2015 में पैरिस में आयोजित हुए सम्मेलनों के दौरान भी देखने को मिली थी। ख़ूब बातें हुईं, लेकिन नतीजा वही ढाक के तीन पात। ग्लासगो सम्मेलन भी कुछ उसी दिशा में जाता दिखा। ग्लासगो सम्मेलन में भी सबसे बड़ी चिंता यही उभर कर सामने आई कि आख़िर 2050 तक 'ज़ीरो' कार्बन उत्सर्जन का लक्ष्य कैसे हासिल हो सकेगा? चिंताजनक बात यह है कि अमेरिका जैसे विकसित देशों को जो पहल करनी चाहिए, वह होती दिख नहीं रही। अब तक जितने भी सम्मेलन हुए, उनका सार यही देखने में आया कि कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लक्ष्य को हासिल करने के लिए अमीर देश विकासशील देशों पर ही दबाव डालते रहे हैं।

अमीर देश कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लक्ष्य को दूसरे देशों पर तो थोपते रहे हैं, लेकिन ख़ुद इस दिशा में आगे बढ़ने से कन्नी काटते रहे हैं। उल्लेखनीय है कि अमेरिका वर्ष 2017 में पेरिस समझौते से सिर्फ़ अपने हितों के कारण ही पीछे हट गया था। ब्रिटेन और चीन जैसे देशों का रवैया भी संतोषजनक नहीं रहा है।

इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए विकासशील देशों को अमीर व विकसित देशों द्वारा जो आर्थिक व तकनीकी सहायता मिलनी चाहिए वह भी नहीं मिल रही है। परिणामस्वरूप वे भी अपने यहां उन योजनाओं को लागू ही नहीं कर पा रहे, जिनसे कार्बन उत्सर्जन में कमी लाई जा सकती है। अमीर देश विकासशील देशों को सालाना 100 अरब डालर की मदद देने की प्रतिबद्धता को गंभीरता से नहीं ले रहे हैं। यही नहीं 'ज़ीरो' कार्बन उत्सर्जन की समय सीमा को लेकर विकसित देशों में आपसी सहमति का भी अभाव रहा है।

ऐसे शिखर सम्मेलनों का सबसे बड़ा गतिरोध यह रहा है कि सबसे बड़े उत्सर्जक देशों के नेताओं ने जो वादे किए और जो वैज्ञानिक व नागरिक समाज से जुड़े नेता करने के लिए कह रहे हैं, उनके बीच कोई तालमेल नहीं है। जो वादे किए गए और वास्तव में जिन पर अमल हो सका, उनके बीच भी तालमेल नहीं है। मुश्किल यह है कि विकसित देश भारत सहित अन्य विकासशील देशों पर कार्बन उत्सर्जन कम करने के लिए दबाव तो बनाते हैं, लेकिन ख़ुद स्वच्छ उर्जा की क़ीमत देने को तैयार नहीं हैं।

कुल मिलाकर ग्लासगो शिखर सम्मेलन में सभी देश कार्बन उत्सर्जन पर चिंतित तो दिखे, लेकिन उनमें जवाबदेही का अभाव दिखा और मूल प्रश्न अभी भी मुंह बाए खड़ा है कि कार्बन उत्सर्जन में कटौती का लक्ष्य कैसे हासिल हो पाएगा? ग़ौरतलब कि कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के लिए अब तक जितने भी लक्ष्य निर्धारित किए जाते रहे हैं, उन्हें हासिल करने की दिशा में ज़मीनी स्तर पर उतने ठोस प्रयास होते दिखे नहीं हैं, जितने की होने चाहिए। ग्लासगो जैसे सम्मेलन किसी तार्किक नतीजे पर पहुंच सकें इसके लिए ज़रूरी है कि विकसित देश अपने नज़रिये को बदलें। विकसित देश जब तक अपनी जवाबदेही को स्वीकार नहीं करेंगे, यह चुनौति ज्यों की त्यों बनी रहेगी। यह कहना ज़्यादा उचित होगा कि इस मुद्दे पर पर दुनिया के उन देशों को पहल करने की ज़रूरत है जो जलवायु संकट पर सबसे ज़्यादा चिंता जताते रहे हैं और इससे निपटने की ज़िम्मेदारी विकासशील तथा ग़रीब देशों पर डालते रहे हैं।

आवश्यकता इस बात की भी है कि कार्बन उत्सर्जन कम करने के लिए विकसित और विकासशील देशों की ज़िम्मेदारियों और लक्ष्यों को भी स्पष्ट किया जाए। ऐसे सम्मेलन तभी सार्थक बन सकेगें, जबकि सभी देशों को जवाबदेही के दायरे में लाया जाए। तमाम देशों को यह समझना होगा कि यह पूरी दुनिया का साझा एजेंडा है। जब तक पर्यावरण बिगाड़ने का ठीकरा ग़रीब देशों पर फूटता रहेगा जलवायु की यह चनौती दुष्कर बनी रहेगी। यदि विकसित देश यह चाहते हैं कि विकासशील देश स्वच्छ ऊर्जा संसाधनों का इस्तेमाल करें तो उन्हें इनकी मदद के लिए आगे आना होगा। ■■

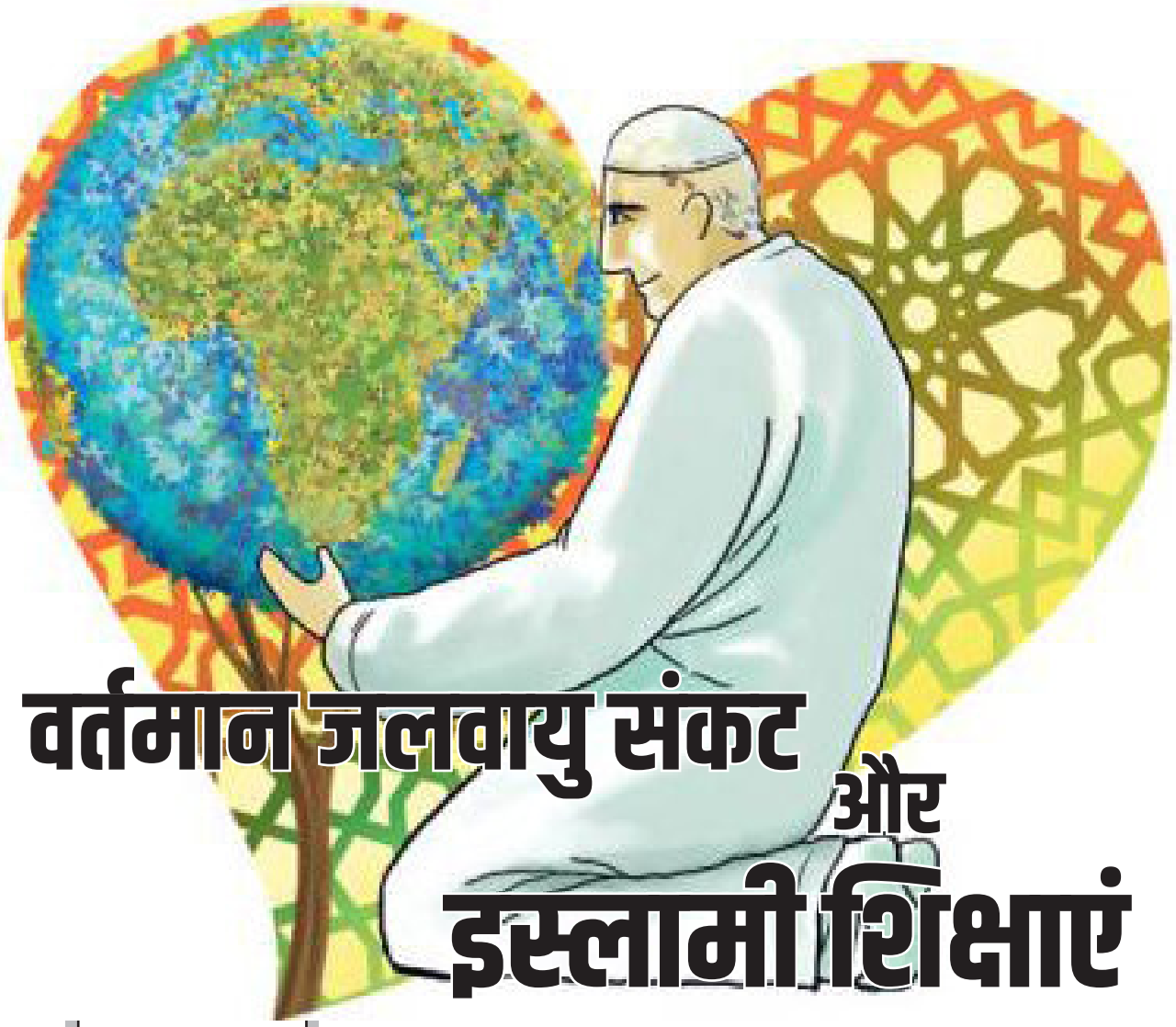

वर्तमान जलवायु संकट और इस्लामी शिक्षाएं

मुख्य स्तम्भ



सुफ़ियान अहमद

आज जलवायु संकट और पर्यावरण सुरक्षा एक बहुत बड़ी समस्या बन चुकी है। प्रकृति की ओर से हमें लगातार यह चेतावनी मिल रही है कि अगर हमने अपने आपको नहीं संभाला और बहुत जल्द इस पर्यावरण की सुरक्षा के लिए काम नहीं किया तो यहां जीवन का बाक़ी रहना बहुत कठिन हो जाएगा। इन्सानों ने ख़ुद अपने हाथों से अपनी बर्बादी का पूरा सामान कर लिया है। हम देखते हैं कि यह पूरा संसार, यह पूरा गृह और ब्रम्हांड हमारे लिए ईश्वर का दिया हुआ एक अनमोल तोहफ़ा है। यह धरती और इस धरती पर उपलब्ध स्वच्छ पानी व शुद्ध हवा और इसी प्रकार आसमान में और इस आसमान से परे जो कुछ भी है वह सब का सब हमारे लिए कुदरत का एक अनमोल तोहफ़ा है। इसमें सूरज है चांद है, दिन-रात का आना-जाना है, इसमें आकाश गंगाएं हैं और इन सब में एक संतुलन है। इस्लाम ने हम सबको इस संतुलन में किसी प्रकार की छेड़छाड़ न करने की शिक्षा दी है। आइए हम यह देखें कि पर्यावरण के बारे में इस्लाम की शिक्षाएं क्या हैं?

क़ुरआन कहता है–"अल्लाह ने इस पर्यावरण में जो संतुलन रखा है, तुम उसमें कोई ख़राबी पैदा मत करो।"

(क़ुरआन-55:8)

हम देखते हैं कि इस धरती के साथ-साथ इस पूरे ब्रह्मांड में जो संतुलन और अनुशासन है, इसी से इस धरती पर मानव जीवन संभव है। यदि यह संतुलन बिगड़ जाएगा, जैसा कि अभी बिगड़ रहा है। इन्सान भारी मात्रा में कार्बन और ज़हरीली गैसों का उत्सर्जन कर रहा है।

पूरे पर्यावरण पानी, धरती और हवा में ज़हर ही ज़हर घुलता जा रहा है। हम जिस हवा में सांस ले रहे हैं वह साफ़ नहीं है, हम जो पानी पी रहे हैं वह शुद्ध नहीं है। हालात बद से बदतर होते जा रहे हैं।

क़ुरआन की लगभग 300 आयतों और 40 हदीसों में पर्यावरण संबंधी जानकारियां, उनमें बिगाड़ पैदा करने के प्रभावों और कारणों तथा एक अच्छे वातावरण वाली ज़िन्दगी के लिए मार्गदर्शन पाया जाता है, जो इस्लाम के पर्यावरण संबंधी पक्ष को स्पष्ट करता है। इन आयतों एवं हदीसों का सार यह है कि अल्लाह ने धरती और आकाश की हर वस्तु के बीच एक संतुलन रखा है, जिसे बनाए रखना इन्सान का कर्तव्य है। इसके अलावा इस संतुलन में बिगाड़ पैदा करना या पर्यावरण को दूषित करना गुनाह भी है। इस्लाम में साफ़-सफाई, पाकी या पवित्रता पर बहुत ज़ोर दिया गया है और इस संबंध में बहुत से निर्देश मिलते हैं। इन निर्देशों के परिणामस्वरूप जो समाज अस्तित्व में आता है, वहां पर्यावरण को दूषित न करने, अर्थात् स्वच्छ भोजन, साफ़ पानी, शुद्ध हवा एक ईमान वाली ज़िन्दगी का अनिवार्य अंग होगा और ऐसे तमाम तत्व जो उन्हें दूषित और हानिकारक बनाएं उनकी एक अच्छे समाज में कोई जगह नहीं होनी चाहिए, चाहे उनसे किसी का कोई हित ही क्यों न जुड़ा हो। इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) ने स्पष्ट रूप से कुछ प्रदूषणों से मना किया है।

• हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि.) से रिवायत है कि हम से अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने फ़रमाया, दो घृणित कार्यों से बचो। हमने पूछा, ऐ अल्लाह के रसूल! वे घृणित कार्य क्या हैं? आप (सल्ल.) ने फ़रमाया, 'रास्तों या छायादार वृक्षों के नीचे मल-मूत्र त्यागना।'



• तबरानी ने हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि.) से रिवायत किया है कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल.) से सुना है, 'जो कोई सार्वजनिक उपयोग की जगहों में मल-मूत्र त्यागता है उस पर अल्लाह, फ़रिश्तों और इन्सानों की ओर से फिटकार होती है।'

मल-मूत्र वह न्यूनतम प्रदूषण है जो इन्सान जाने-अनजाने में सार्वजनिक जगहों, छायादार वृक्षों और पानी में फैला सकता है। जब इस प्रकार के प्रदूषण से मना किया गया है तो फिर गंभीर प्रकार के प्रदूषणों को जिनमें विषैले रासायनिक पदार्थों को ज़मीन, पानी और वातावरण में फैलाना शामिल है, उन्हें कैसे सहन किया जा सकता है। वर्तमान पर्यावरण संबंधी संकट का एक पहलू यह भी है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग नहीं करते, इसमें सीमाओं का उल्लंघन कर जाते हैं। इस संबंध में अगर इस्लाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के निर्देश पर विचार किया जाए तो एक बेहतर स्थिति पैदा होगी। इस संबंध एक हदीस हमारा भरपूर मार्गदर्शन करती है–

• अल्लाह के रसूल (सल्ल.) एक बार हज़रत सआद (रज़ि.) के पास से गुज़रे जो नमाज़ के लिए वुज़ू कर रहे थे। आपने उन्हें देखकर फ़रमाया, 'ऐ सआद! तुमने सीमा का उल्लंघन किया है?' हज़रत सआद ने पूछा, क्या वुज़ू करने में भी सीमा का उल्लंघन है? आप (सल्ल.) ने फ़रमाया, 'हां, चाहे तुम बहती नदी के किनारे क्यों न हो।'

इस हदीस में एक नेक काम के लिए भी आवश्यकता से अधिक पानी के इस्तेमाल से मना किया गया है और प्रचुर मात्रा में पानी उपलब्ध होने के बावजूद ऐसा करने से रोका गया है। आज हम देखते हैं कि हमारे जीवन में जिन चीज़ों की सबसे अधिक बर्बादी होती होती है, उनमें पानी सबसे महत्वपूण चीज़ है। आने वाले समय में उपलब्ध स्वच्छ पानी की कमी निश्चित है, क्योंकि अधिकतर पीने योग्य पानी दूषित हो चुका है। पर्यारण में प्रदूषण के कारण बारिश की व्यवस्था बिगड़ गयी है और भूमि के नीचे पानी के स्रोत भी

सूख रहे हैं।

इसके अलावा इस्लाम ने पेड़-पोधों की सुरक्षा पर ख़ास ज़ोर दिया है। पेड़-पौधों का अस्तित्व धरती पर जीवन की गारंटी है। इनसे इन्सानों व अन्य जीवों को भोजन ही नहीं मिलता, बल्कि अन्य चीज़ों के अतिरिक्त ऑक्सीजन भी मिलती है। ऐसे में यदि हरियाली की हरी चादर ज़मीन से समाप्त होने लगे तो इसका नुक़सान धरती के सभी जीवों को उठाना पड़ेगा। वर्तमान समय में यही हो रहा है। इस धरती पर पायी जाने वाली हरी चादर जो जंगल और खेत-खलियान बनाते हैं, पिछले 50 वर्षों में एक तिहाई से अधिक समाप्त हो चुकी है। ऐसे में ग्रीन हाउस गैसों का दुष्प्रभाव जलवायु परिवर्तन के भारी बदलाव के रूप में सामने आ रहा है।

इन हालात में इस्लाम के पैग़म्बर की शिक्षाओं का महत्व कई गुना बढ़ जाता है जो आप (सल्ल.) ने पेड़-पौधें की सुरक्षा के संदर्भ में दी हैं–

• हज़रत अनस बिन मालिक से (रज़ि.) रिवायत है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने फ़रमाया, 'कोई मुसलमान जब एक ऐसा वृक्ष लगाता है या फ़सल उगाता है जिसमें से चिड़िया या अन्य जीव कुछ खाते हैं तो उसे सदक़े का अज्र (दान का प्रतिदान) मिलता है।'

(बुख़ारी, मुस्लिम, तिरमिज़ी)

आप (सल्ल.) ने पेड़-पौधों और पत्तों को अकारण तोड़ने से मना किया है। अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने फ़रमाया है कि 'अगर क़ियामत सामने हो और किसी के हाथ में खजूर का पौधा लगाने के लिए मौजूद हो और वह उसे लगा सकता हो तो उसे चाहिए कि उसे लगा दे।'

आप (सल्ल.) के इन कथनों से एक ओर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि पेड़-पौधों को अकारण काटने या उन्हें नुक़सान पहुंचाने से मना किया गया है और दूसरी ओर उनके लगाने को पुण्य कार्य बताया गया है। उपर्युक्त तथ्यों की रोशनी में यह स्पष्ट हो जाता है कि क़ुरआन और हदीस में पर्यावरण की सुरक्षा के लिए जो शिक्षाएं दी गयी हैं उनका वर्तमान समय में कितना महत्व है और स्वयं मुहम्मद (सल्ल.) का आदर्श जीवन इसकी प्रेरणा देता है। हमें इस्लाम की इन शिक्षाओं की रोशनी में आत्म-मंथन करने की आवश्यकता है। आज पर्यावरण प्रदूषण और जलवायु का संकट अपने चरम पर है और प्रकृति का संतुलन बिगड़ चुका है। ऐसे में इस्लामी शिक्षाएं हमसे मांग करती हैं कि हम प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग सोच-समझकर करें और पर्यावरण को प्रदूषित करने से बाज़ आ जाएं।

■■







विशेष आयोजन

प्राचीन भारतीय साहित्य में परदा-प्रथा

डॉ० सुरेन्द्र 'अज्ञात'

आज अनेक हिन्दू नेता ऐसे हैं जो परदा-प्रथा का विरोध करते हुए कहा करते हैं कि यह प्रथा हमने मुसलमानों से सीखी थी। कई कहा करते हैं कि मध्यकाल में मुसलमान हमलावर क्योंकि हिन्दू बालाओं का अपहरण कर लेते थे, अतः परदा-प्रथा अनाई गई। इससे कन्याओं का सौन्दर्य ढका रहता था और अपहरणकर्ता उसे देख नहीं पाता था।

ऊपरी नज़र से देखने पर यह बात बहुत अच्छी लगती है, परन्तु क्या इतिहास से भी इसका समर्थन होता है?

हमारे पास भास नामक नाटककार के 13 नाटक हैं जो 1909 ई० में गणपतिशास्त्री को केरल में मिले थे। ये नाटक ईसा पूर्व चौथी-पांचवीं शताब्दी के हैं। भास का नाम कवि कालिदास ने बहुत आदर से लिया है। स्पष्ट है वह कालिदास से काफ़ी पहले हुआ, अतः विद्वान उसे ईपू का मानते हैं। दूसरे भास का एक श्लोक कौटिल्य (ई०पू० 300) ने अपने 'अर्थशास्त्र' में उद्धृत किया है। इस सबके मद्देनज़र विद्वानों ने भास का समय ईपू चौथी-पांचवीं शताब्दी माना है।

भास के नाटकों का विशेष अध्ययन करने वाले पं० बलदेव उपाध्याय अपनी पुस्तक 'महाकवि भास: एक अध्ययन' (1964 ई०) में लिखा है: ''भास के नाटकों से स्त्रियों के विभिन्न रूपों का पता चलता है। विवाह के बाद उनका जीवन संकुचित हो जाता था। परदा-प्रथा का अस्तित्व भी दिखाई पड़ता है...राजपरिवार की स्त्रियां परदा-प्रथा का अनुकरण करती थीं।'' (पृ० 159)

भास के बाद कालिदास ने अपने जगत् प्रसिद्ध नाटक 'अभिज्ञान-शाकुंतलम्' में, जिसे संक्षेप में शकुन्तला नाटक भी कह देते हैं, परदा का ज़िक्र किया है।

जो दो ऋषिकुमार शकुन्तला को लेकर राजा दुष्यंत के दरबार में जाते हैं, तब राजा उनसे पूछता है-

केयमवगुण्ठनवती (5/14)

अर्थात, यह घूंघट वाली कौन है?

इस पंक्ति की व्याख्या करते हुए 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' नाटक के संस्कृत-व्याख्याकार नवकिशोरकर शास्त्री लिखते हैं-

''अवगुण्ठनवती-शिरःप्रच्छादनवती
'अथावगुण्ठनव्यावगुण्ठिका।
योषाशिरःप्रावरणक्रियायां स्यात्'
इति शब्दाब्धिः, एतेनावगुण्ठनप्रथाया
अतीव प्राचीनत्वमुक्तं भवति,
यथाहांगिराः 'श्वशुरस्याग्रतो
यस्माच्छिरः प्रच्छादक्रिया।
पुत्रैर्दर्भेण सा कार्या मातुरभ्युदयार्थिभिः'
इति। एतेन अवगुण्ठनस्य
यवनराजत्ववादिनां
चिरन्तनमतासहिष्णूनामाधुनिकानां
मतमपास्तम्।''

(अभिज्ञान शाकुन्तलम्, किशोरकेलि-संस्कृत व्याख्या, पृ॰ 335, 1964 पंचम संस्करण)

अर्थ: अवगुण्ठनवती का अर्थ है-सिर ढका हुआ है। 'शब्दाब्धि' नामक कोश में कहा गया है-स्त्री के सिर को ढकने की क्रिया को अवगुण्ठन और अवगुण्ठिका कहते हैं। इससे अवगुण्ठन क्रिया (परदा-प्रथा) अति प्राचीन सिद्ध होती है।

अंगिरा स्मृति में भी कहा गया है कि बहू ससुर के सामने सिर ढक कर जाए। पुत्रों को चाहिए कि अपनी मां का सिर दर्भ नामक घास से ढक दिया करें। इससे उनकी मां का कल्याण व प्रगति (अभ्युदय) होगी। इस हवाले से उन आधुनिक विद्वानों का मत निरस्त (रद्द) हो जाता है जो इस परदा-प्रथा को मुसलमानों के राज से जोड़ते हैं।

1955 के बाद भी काफ़ी ऐसे मामले प्रकाश में आते रहे जब लोग बहुविवाह करवाने के लिए इस्लाम अपनाने का प्रमाण पत्र, झूठा या सच्चा, अदालतों में पेश करते रहे। जिनके पास धर्मपरिवर्तन का सच्चा प्रमाण पत्र भी था, उनमें से कई बहुविवाह करवाने की सुविधा के लिए ही, काग़ज़ी तौर पर ही, मुसलमान बने थे, न कि कुरआन की शिक्षाओं से प्रेरित होकर। उन्हें अति प्राचीनकाल से चली आ रही बहुविवाह की प्रथा से मतलब था और कोई चीज़ उनके लिए महत्व नहीं रखती थी।

इसी पूर्वोद्धृत पुस्तक का बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर कान्तानाथ शास्त्री तेलंग की टिप्पणियां भी शामिल हैं। श्री तेलंग ने आलोच्य पंक्ति पर टिप्पणी करते हुए लिखा है: ''अवगुण्ठनवती=घूंघट वाली। इससे यह स्पष्ट है कि घूंघट की प्रथा बहुत पुरानी है। यह कहना ठीक नहीं है कि परदे की प्रथा मुसलमानों के साथ भारत आयी । 'असूर्यंपश्या' (जिन्हें सूर्य ने भी न देखा हो) आदि शब्दों का प्रयोग पाणिनीय व्याकरण में भी मिलता है।''

(पृ॰ 618-619)

श्री तेलंग ने 'असूर्यंपश्या' स्त्रियों का विशेषण बताया है और यह भी बताया है कि यह शब्द पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' में मिलता है, जिसे ईसा पूर्व 6वीं-7वीं शताब्दी की रचना माना जाता है। इसका अर्थ है कि तब परदे की रस्म इतनी सख़्त थी कि श्रेष्ठ स्त्रियां वे समझी जाती थीं जिन्हें कभी परपुरुष तो क्या, सूर्य तक ने न देखा हो। मेरा विचार है कि यह विशेषण तो शायद मुसलमानों में भी प्रचलित नहीं है और न ही उन्हें इस तरह की पाबन्दी ही मान्य है। जहां तक मैंने इस्लाम को समझा है, उसमें अपने घर की चारदीवारी में अपने परिवार के सदस्यों, बच्चों आदि के साथ स्त्री के लिए सर्दियों में धूप में बैठने की कहीं मनाही नहीं की गई है, जो स्त्री इस तरह धूप में बैठेगी, उसे सूर्य तो देखेगा ही।

सूर्य सिर्फ़ ऐसी स्त्री को नहीं देख सकता, जिसे सदा घर में भी ट्रंक में बन्द करके रखा जाए या 'भोरे' (=धरती में खोदे गए गड्ढ़े या तहख़ाने) में रखा जाए। पाणिनीय व्याकरण और प्राचीन संस्कृत ग्रंथ इस तरह की 'असूर्यंपश्या' स्त्रियों का वर्णन बहुत शान से करते हैं। यह विशेषण उनकी बहुत बड़ी विशेषता के तौर पर, उनकी श्रेष्ठता और महानता का परिचय देने के लिए, दाग़ा जाता था।

कहां अति प्राचीनकाल से ही हिन्दू नारी के लिए इतनी संकुचित व सख़्त परदा-प्रथा और कहां उस समय के हज़ारों साल बाद मुसलमानों के राज का आगमन। क्या कोई जुड़ता है संबंध इस राज का ईपू की हिन्दू प्रथाओं से? फिर उसे क्यों दोष देते हो?

यह भी आमतौर पर कहा जाता है

कि मुसलमानों को बहुविवाह की छूट है, परन्तु हिन्दू बेचारे तो एकपत्नीव्रती हैं। इस विषय में भी पं॰ बलदेव उपाध्याय की 'महाकवि भास' पुस्तक हमारा काफ़ी मार्गदर्शन करती है। उपाध्याय जी लिखते हैं: ''भास के समय में बहु-विवाह की प्रथा प्रचलित थी। लोग एक से अधिक विवाह करते थे। बहुविवाह की प्रथा प्रायः धनिकों या राजाओं में थी।'' (पृ॰ 161)

वास्तविकता यह है कि भास से पहले भी बहुविवाह की प्रथा थी और यह धनिकों या राजाओं में तो प्रायः थी ही, ऋषियों/मुनियों में भी थी । ऋषि याज्ञवल्क्य बहुत प्रसिद्ध हैं, उनके बारे में आता है कि उनकी दो पत्नियां थी-मैत्रेयी और कात्यायनी (देखें, बृहदारण्यक उपनिषद् 2/4/1)। राजा दशरथ की तीन पत्नियां थीं, पाण्डु की दो अर्थात् पाण्डव दो मांओं की संतान थे-कुन्ति और माद्री की। आगे पाण्डवों की भी कम से कम दो-दो पत्नियां थीं-अर्जुन की द्रौपदी और सुभद्रा तथा भीम की द्रौपदी और हिडिम्बा।

यहां तक कि मुंशी प्रेमचन्द की दो पत्नियां थीं-पहली को उन्होंने 'छोड़' दिया था: बिना तलाक़ के, उसे गुज़ारा वग़ैरह वे भेजते रहे। एक पत्नी की प्रथा 1955 में शुरू हुई और उसे वैधानिक मान्यता मिली। दो पत्नियां एक समय रखना तभी अपराध बना।

जब यह विधान बना तब प्राचीनकाल के बहुविवाहों के हवाले देकर काफ़ी शोर मचाया गया था। ऊपर हमने जो कुछ उदाहरण दिए हैं, उनसे अतिरिक्त भी उदाहरण दिए गए। अतः मुसलमानों से बहुविवाह के मामले में हम केवल 1955 में पिछड़े हैं, न कि प्राचीनकाल से पिछड़े हुए हैं।

1955 के बाद भी काफ़ी ऐसे मामले प्रकाश में आते रहे जब लोग बहुविवाह करवाने के लिए इस्लाम अपनाने का प्रमाण पत्र, झूठा या सच्चा, अदालतों में पेश करते रहे। जिनके पास धर्मपरिवर्तन का सच्चा प्रमाण पत्र भी था, उनमें से कई बहुविवाह करवाने की सुविधा के लिए ही, काग़ज़ी तौर पर ही, मुसलमान बने थे, न कि क़ुरआन की शिक्षाओं से प्रेरित होकर। उन्हें अति प्राचीनकाल से चली आ रही बहुविवाह की प्रथा से मतलब था और कोई चीज़ उनके लिए महत्व नहीं रखती थी।

प्राचीन भारत की बात चलती है तो कई लोग बहुत भावुक हो जाते हैं-मानो वह स्वर्ण युग हो। परन्तु पं॰ बलदेव उपाध्याय जी भास के नाटकों के आधार पर ईपू की चौथी-पांचवीं शताब्दी के भारत का वर्णन करते हुए लिखते हैं: ''भास के समय द्यूत (जुआ) कोई अनुचित व्यवहार नहीं माना जाता था या कम से कम शिष्टजनानुमोदित (=सभ्य/ शिष्ट लोग इसका समर्थन करते

और हम (अल्लाह) ने तुम्हें मर्दों और औरतों के जोड़े के रूप में पैदा किया। (क़ुरआन, 78:9)

अगर आप को दीनदार और तहरीकी घराने में अपने जोड़े की तलाश है तो

साप्ताहिक कान्ति

आपकी सेवा के लिए हाज़िर है।

ज़रूरते रिश्ता

का इश्तिहार बुक कराने के लिए सम्पर्क करें :

Naiem Khan, Manager - Dawat Trust

D-314, Dawat Nagar, Abul Fazl Enclave,

Jamia Nagar, Okhla, New Delhi-110025

Mobile : +91 9891160829

Email : mgrdawat@gmail.com

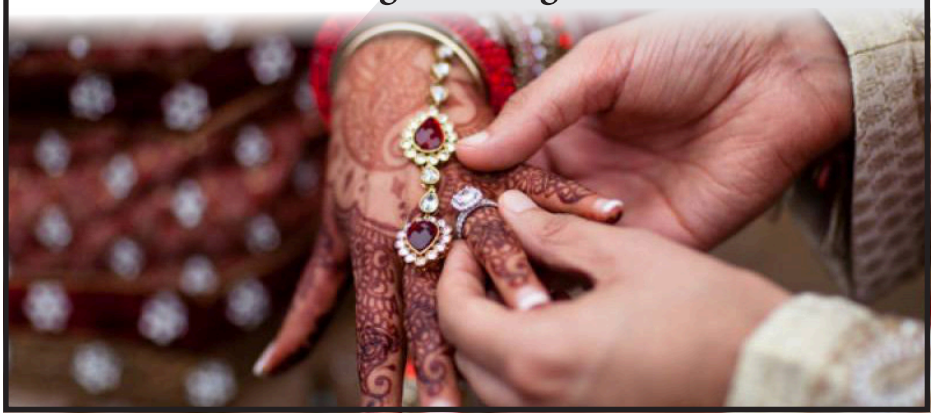

थे) था।'' (पृ॰ 160)

भास के 'चारुदत्त' नाटक और शूद्रक के 'मृच्छकटिकम्' नाटक में द्यूत आम बात है।

उससे पहले महाभारत में भी द्यूत (जुआ आम बात थी। पाण्डव दो बार द्यूत में अपना सारा राजपाट हारे, एक बार वे अपने आपको और अपनी पत्नी द्रौपदी को भी हारे। उससे पहले ऋग्वेद-कालीन समाज में भी द्यूत का प्रचलन था, परन्तु ऋग्वेद में साफ़तौर पर इसका निषेध किया गया है-अक्षैर्मा दीव्यः (ऋग्वेद 10-34-13)।

आर्यों को द्यूत का इतना ख़ब्त सवार था कि वेद की आज्ञा का उद्दंडतापूर्वक उल्लंघन करके कौरव-पाण्डव द्यूत में प्रवृत्त होते रहे और बाद में महाभारत के युद्ध में आपस में लड़कर नष्ट हो गए।

आज स्वतंत्र भारत के संविधान में यद्यपि द्यूत का निषेध है, तथापि वह नए-नए रूपों में अपना अस्तित्व निरंतर बनाए हुए हैं।

प्राचीन भारत में दास प्रथा भी थी। पं॰ बलदेव उपाध्याय लिखते हैं-''दास-प्रथा के भी (भास के नाटकों में) संकेत मिलते हैं। मूल्य देकर आदमी ख़रीद लिए जाते थे...वसन्तसेना की दासी मदनिका क्रीत (=पैसे देकर ख़रीदी हुई) थी। उसी को मुक्त कराने के लिए उसका प्रेमी सज्जलक चोरी करता है।''

संस्कृत के नाटकों में कई तरह की गालियां मिलती हैं, किसी को 'दास्याः पुत्रः' (दासी का पुत्र) कहना उसे घोर रूप में अपमानित करना था-यह सबसे घटिया व नीची गाली थी।

प्राचीन नाटकों में दो चोर विशेषतः प्रसिद्ध है-सज्जलक और शर्विलक। दोनों ही चोर ब्राह्मण हैं और सेंध लगाते समय जनेऊ से फीते का काम लेते हैं-वे सेंध लगाते समय जो छेद बनाते हैं, वह कभी घड़े-सा बना देते हैं, कभी किसी दूसरी वस्तु-सा, जिसे देखकर लोग चोर के कलाकौशल की प्रशंसा करते हैं, हालांकि चोरी करने वाले की निन्दा की जानी चाहिए। इस विषय में उपाध्याय लिखते हैं: 'ब्राह्मणों में कुछ लोग दुष्ट प्रवृति के होते थे और चोरी आदि जैसे कुकृत्य भी करते थे।

हमें उस युग का साहित्य पढ़कर ही उसके बारे में कोई चित्र अपने मन में बसाना चाहिए, मनःकल्पित बातें इतिहास नहीं होतीं। भास के नाटकों से उस युग का जो चित्र उभरता है उसमें ऐसा बहुत कुछ है, जो किसी भी तरह प्रशंसनीय नहीं ठहराया जा सकता-चोरी, वेश्यावृत्ति, दासप्रथा, बहुविवाह, परदा-प्रथा आदि। यह न किसी स्वर्णयुग का चित्र है, न कथित सत्युग का। अंत में मैं निवेदन करूंगा कि इन 13 संस्कृत नाटकों को, जिनमें से कई तो एकांकी हैं, हर भारतीय को अवश्य पढ़ना चाहिए। इनकी संस्कृत बहुत सरल, आम बोल-चाल की भाषा है। हर नाटक अलग-अलग मिल जाता है-हिन्दी व्याख्या के साथ।

(सज्जलक का चरित्र, पृ॰ 157)

तब भी समाज में वेश्यावृत्ति थी। उपाध्याय जी लिखते हैं-''समाज में वेश्यावृत्ति का भी अस्तित्व दिखाई देता है। यद्यपि उनमें कुछ शिष्ट (औरतें) भी होती थीं, पर सामान्यतया लोग उन्हें बाज़ारू वस्तु समझते थे, जिसे जो चाहे पैसा देकर ख़रीद ले, सामान्य स्त्रियों की अपेक्षा पण्यस्त्रियां (=वेश्याएं) कलाओं में दक्ष हुआ करती थीं।''

साहित्य समाज का दर्पण होता है। भास के ये नाटक ईपू चौथी-पांचवीं शताब्दी के भारतीय समाज का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं। अतः ये उस समय के एक तरह से ऐतिहासिक दस्तावेज़ हैं।

यदि प्राचीन भारत की हमने कोई तस्वीर मन में कल्पित कर रखी है और वह तत्कालीन समाज के इस प्रामाणिक चित्र से मेल नहीं खाती तो यह हमारा ही क़सूर है, क्योंकि किसी युग की निराधार तस्वीर कल्पित करना नितांत निन्दनीय है।

हमें उस युग का साहित्य पढ़कर ही उसके बारे में कोई चित्र अपने मन में बसाना चाहिए, मनःकल्पित बातें इतिहास नहीं होतीं। भास के नाटकों से उस युग का जो चित्र उभरता है उसमें ऐसा बहुत कुछ है, जो किसी भी तरह प्रशंसनीय नहीं ठहराया जा सकता-चोरी, वेश्यावृत्ति, दासप्रथा, बहुविवाह, परदा-प्रथा आदि। यह न किसी स्वर्णयुग का चित्र है, न कथित सत्युग का।

अंत में मैं निवेदन करूंगा कि इन 13 संस्कृत नाटकों को, जिनमें से कई तो एकांकी हैं, हर भारतीय को अवश्य पढ़ना चाहिए। इनकी संस्कृत बहुत सरल, आम बोल-चाल की भाषा है। हर नाटक अलग-अलग मिल जाता है-हिन्दी व्याख्या के साथ। वैसे अंग्रेज़ी और संस्कृत में भी व्याख्याएं उपलब्ध हैं। इन्हें पढ़ना साहित्य का साहित्य है और इतिहास का इतिहास: एक पंथ दो काज।

■■

दर्शन



मुत्तलिब मिर्ज़ा



मनुष्य एक नैतिक अस्तित्व

मनुष्य ईश्वर की वह कृति है, जिसमें भलाई और बुराई के करने की पर्याप्त शक्तियां मौजूद होती हैं। मनुष्य इच्छाएं रखता है और उन्हें पूरा करने की कोशिशें करता है। मनुष्य अगर अपनी इच्छाओं को बेलगाम छोड़ दे और साम दाम दंड भेद, किसी भी तरह उन्हें पूरा करने में लग जाए तो यह मनुष्य व समाज दोनों के लिए यह स्थिति भयावह होती है। इसीलिए ईश्वर ने मनुष्यों को ऐसी नैतिक व्यवस्था से परिचित कराया है जो उसे अपनी इच्छाओं पर क़ाबू रखना सिखाए। इच्छाओं की पूर्ति में सही व ग़लत का ज्ञान कराए और यह कि मनुष्य अपनी इच्छाओं की पूर्ति में दूसरों के अधिकारों का हनन न करने लगे।

मानव समाज के विकसित और मज़बूत होने की वास्तविक कसौटी उसका नैतिक तौर पर परिपक्व होना ही है। नैतिक मूल्यों व शिष्टाचार के ज़रिये से ही किसी समाज को सुंदर, सुसज्जित और उदार बनाया जा सकता है। नैतिकता ही मनुष्य के व्यवहार का मुख्य आधार है। नैतिकता ही के द्वारा मनुष्य ईमानदारी, सत्य, अहिंसा, सहिष्णुता और न्याय जैसे उच्च मूल्यों के साथ जीने लगता है। नैतिकता एक मनुष्य को दूसरे के आत्मसम्मान व स्वाभिमान की रक्षा करना सिखाती है।

दूसरों के प्रति घृणा, पूर्वाग्रह व अहंकार के भाव को भी नैतिकता ही के द्वारा ख़त्म किया जा सकता है, जबकि नैतिक पतन समाज को मानसिक दिवालियेपन व संकीर्णता की खाई में ले जाता है और समाज बिखरने व बिगड़ने लगता है। मनुष्य हीन भावना से ग्रसित होने लगता है और इसी भाव में वह दूसरों को अपमानित करने, नफरत करने यहां तक की हत्या करने तक को आतुर हो जाता है। इस समय भारतीय समाज की सबसे बड़ी त्रासदी नैतिक मूल्यों का पतन होना है। देश में बढ़ती नफ़रत, असहिष्णुता और सामाजिक दायरों की संकीर्णता का एक बहुत बड़ा कारण नैतिक पतन है। पिछले दिनों असम के दरंग ज़िले का एक वीडियो वायरल हुआ, जिसमें एक पत्रकार एक मृत व्यक्ति पर उछल रहा है, देश के हर व्यक्ति को यह सवाल अपने आप से करना चाहिए कि क्या यही ''न्यू इंडिया'' का चरित्र है? क्या धर्मांधता में कोई व्यक्ति इस स्तर तक गिर सकता है जहां पशु भी उसे देखकर भयभीत हो जाए।

इस तरह की घटनाएं हमारे समाज के खोखलेपन को उजागर करती हैं, पिछले साल अमेरिका में जॉर्ज फ्लॉयड नाम के एक अश्वेत व्यक्ति की एक पुलिस कर्मी अपने पैर से गला दबा कर हत्या कर देता है। इस घटना के बाद

पूरे अमेरिका में नस्लीय भेदभाव के ख़िलाफ़ प्रदर्शन होते हैं, आरोपी पुलिस कर्मी के ख़िलाफ़ मात्र तीन सप्ताह में सुनवाई ख़त्म हो जाती है, और पीड़ित को न्याय मिल जाता है, अमेरिकी सरकार नस्लीय भेदभाव व पुलिस सुधार के लिए ''जॉर्ज फ्लॉयड न्याय'' नाम से बिल भी लेकर आती है, भारत में हर रोज़ जातीय, नस्लीय व धार्मिक भेदभाव के चलते हत्या, बलात्कार व शोषण की कितनी ही घटनाएं होती हैं, लेकिन भारतीय समाज में इस तरह की घटनाओं के बाद भी किसी बड़े परिवर्तन की चर्चा शुरू नहीं होती है।

भारतीय समाज में बढ़ती हुई धर्मांधता व नैतिक पतन का अंदाज़ा इन घटनाओं से लगा सकते हैं कि हाल ही में क्रिकेट विश्वकप में भारतीय टीम के कमज़ोर प्रदर्शन पर भरतीय क्रिकेट टीम के कप्तान विराट कोहली को सोशल मीडिया पर उनकी 9 महीने की बेटी के बलात्कार की धमकी मिलती है, भरतीय टीम के पूर्व कप्तान महेंद्र सिंह धोनी को कुछ वर्ष पहले इसी तरह सोशल मीडिया पर उनकी बेटी के बलात्कार की धमकी मिलती है, क्योंकि वह एक पाकिस्तानी क्रिकेटर के बेटे को गोद में लेकर प्यार करते हैं, कई गांवों और क़स्बों में फेरी वालों से पहचान पत्र मांग कर यह सुनिश्चित किया जाता है कि उनका धर्म क्या है और इसके बाद उन्हें वहां अपना सामान बेचने की इजाज़त मिलती है।

इन घटनाओं से केवल असहमत होना काफ़ी नहीं है। अगर ये घटनाएं हमें बेचैन और विचलित नहीं करती हैं तो इसका अर्थ यह है कि हमारा समाज नैतिक पतन के चरम बिंदु की ओर बढ़ रहा है। यह सब सामान्य घटनाएं नहीं हैं। यह धर्मांधता एवं नैतिक पतन का नतीजा है, जिसने भारतीय समाज को इतना खोखला व कमज़ोर कर दिया कि वह किसी को प्रेम करता हुआ नहीं देख सकता। हम एक ऐसे समाज का निर्माण कर रहे हैं, जहां बलात्कार की धमकी देने वाले को कोई डर नहीं होता, लेकिन दिलों को जोड़ने वाले के ख़िलाफ एक भीड़ खड़ी हो जाती है।

भारतीय समाज की वर्तमान स्थिति पैगम्बर ईसा मसीह के उस मशहूर कथन की सी हो रही है जो उन्होंने उस समय के आडम्बरों और दिखावों से भरे समाज से कहा था कि ''तुम्हारी हालत उन कब्रों की जैसी है जिन्हें ऊपर से रंग रोगन किया गया है, हालांकि उसके अंदर मनुष्य की सड़ी गली हड्डियों के सिवा कुछ नहीं है।''

दूसरों के प्रति घृणा, पूर्वाग्रह व अहंकार के भाव को भी नैतिकता ही के द्वारा ख़त्म किया जा सकता है, जबकि नैतिक पतन समाज को मानसिक दिवालियेपन व संकीर्णता की खाई में ले जाता है और समाज बिखरने व बिगड़ने लगता है।

यह भारतीय समाज की बदनसीबी ही है कि इस तरह की घटनाओं को राजनीतिक समर्थन मिलता है, यह घटनाएं ''धर्मसेवा'' एवं ''राष्ट्रसेवा'' समझी जाने लगी हैं। इस तरह की घटनाओं को अंजाम देने वाले अपने आप को ''धर्मरक्षक'' कहते हैं, हालांकि धर्म तो नैतिकता का नाम है। नैतिक परिपक्वता ही धार्मिकता है। धर्म वही है जो मनुष्य को नैतिक तौर पर परिपक्व करे। धर्म इन्सान के चरित्र का उत्थान करता है और उसके व्यवहार में शिष्टाचार लाता है। भारत के मशहूर विचारक सैयद सुलेमान नदवी अपनी पुस्तक सीरतुन्नबी में लिखते हैं- ''दुनिया की सारी ख़ुशी, ख़ुशहाली और शांति नैतिकता की दौलत से है। इसी दौलत की कमी को सरकार और संगठन अपने क़ानून की ताक़त से पूरा करते हैं। अगर मनुष्य अपने नैतिक मूल्यों व कर्तव्यों का निर्वहन पूरी तरह करे तो सरकार को किसी सख़्त क़ानून की आवश्यकता न रहे, इसीलिए धर्म वह है जिसका नैतिक दबाव अपने मानने वालों पर इतना हो कि वह उनके क़दम सीधे रास्ते से भटकने न दें।''

पैगम्बर मुहम्मद का कथन है- ''मुझे नैतिक मूल्यों को पूर्ण करने के लिए भेजा गया है।'' अर्थात ईश्वर ने जो धर्म इन्सानों के लिए बनाया उसका आधार नैतिकता है, मनुष्य के नैतिक अस्तित्व की महत्ता का अंदाज़ा लगाने के लिए पवित्र कुरआन में ईश्वर के इस कथन पर विचारणीय है-''नहीं! मैं क़सम खाता हूं, क़यामत के दिन की और नहीं ! क़सम खाता हूं मैं मलामत करने वाली आत्मा की, क्या मनुष्य यह समझता है कि हम उसकी हड्डियों को कभी इकट्ठा नहीं करेंगे, हरगिज नहीं, हम उसके पोरों को भी ठीक-ठीक बनाने की सामर्थ्य रखते हैं।'' (क़ुरआन-15:1-4)

यह मनुष्य के उस नैतिक अस्तित्व का वर्णन है जो मनुष्य से कोई ग़लती या गुनाह होने पर इसे झंझोड़ता है, कचोके मारता है, हम अपने अंदर झांकें और देखें कि यह नैतिक अस्तित्व हमारे अंदर मौजूद है या नहीं, हमारे अंदर वह आत्मा जीवित है या नहीं जो अमानवीय दृश्यों को देखने के बाद हमें अंदर से मलामत करती हो। इस समय भारतीय समाज का सबसे बड़ा कर्तव्य इस मलामत करने वाली आत्मा को अपने अंदर और समाज में जीवित करना व जीवित रखना है ताकि इस समाज को वीरान होने व चमगादड़ों व उल्लुओं का ठिकाना बनाने से बचाया जा सके। ■■



विकल्प



एस० अमीनुल हसन

बीच का रास्ता : नफ़रत का जवाब होशमंदी

एक सभ्य इन्सान की पहचान यह होती है कि उसमें धैर्य, सहनशीलता, उदारता और समझदारी होती है। क्रोध पर उसका नियंत्रण होता है और वह विवादों को क़ानून की रोशनी में हल करता है, लेकिन आए दिन हम देख रहे हैं कि इस देश का एक छोटा-सा तबक़ा बात-बात पर भड़क जाता है। अतिवादी लोग कहीं भी कोई घटना हो जाए तो उसकी प्रतिक्रिया में हंगामा बरपा कर ज़ुल्म व बर्बरियत पर उतर आते हैं। ये लोग क़ानून को अपने हाथ में लेकर देश को अराजकता की ओर धकेल रहे हैं। ये लोग वही देखना या सुनना चाहते हैं जो इन्हें पसंद हो, यहां तक कि एडवरटाइज़मेंट भी उनकी इच्छाओं के अनुसार होना चाहिए।

जहां यह सब कुछ नहीं होता वहां वे हिंसा और आतंक पर उतर आते हैं। रैलियां और सभाएं करते हैं और भावनात्मक मुद्दे पैदा कर देते हैं। जब हम हालात को देखते हैं तो यह बात समझ में आती है कि एक आम नौजवान पर इन हालात का बहुत बुरा प्रभाव पड़ सकता है। एक ओर वह आक्रमकता का शिकार हो सकता है, तो दूसरी ओर वह पीड़ित होने के मनोभाव से ग्रसित हो सकता है। ऐसे हालात में हमें न तो आक्रामक बनना है और न पीड़ित बनना

है, बल्कि हमें बचाने वाला व छुटकारा दिलाने वाला बनना है। हमें इस देश को बचाने के लिए एक मुक्तिदाता के रूप में काम करने की ज़रूरत है।

समय की यह बहुत बड़ी मांग है कि यह जो बीच का रास्ता है, इस रास्ते को हमें नई नस्लों को दिखाने और बताने की ज़रूरत है। हम जानते हैं कि अभी देश के कुछ हिस्सों में जो घटनाएं हुई हैं, हमें मालूम होना चाहिए यह सारी आग सियासत की रोटी सेकने के लिए जलाई जाती है।

किसी राज्य में कोई घटना हो जाए तो दूसरे राज्य में उसका राजनीतिक फ़ायदा उठाने की कोशिश की जाती है। किसी और देश में भी कोई घटना हो जाए तो उसका भी अपने देश में सियासी फ़ायदा उठाने की कोशिशें की जाती हैं।

ऐसे हालात में हमें भावनाओं में बहने की बजाय तार्किक ढंग से सोचने की ज़रूरत है। हमें विवेकशील बनने की ज़रूरत है। जो लोग आक्रमक होते हैं उनकी सोच भावनात्मक होती है। जो लोग निराश होते हैं और पीड़ित बने रहते हैं वे लोग भी भावनाओं के शिकार होते हैं।

ऐसे में हमें तर्क व समझदारी के साथ चीज़ों को देखना चाहिए और होशमंदी की बुनियाद पर हालात का मुक़ाबला करना चाहिए। नफ़रत का जवाब नफ़रत नहीं है, नफ़रत का जवाब समझदारी है। नफ़रत का जवाब एक ऐसी रणनीति है, जिसके ज़रिये इस देश के हालात को दुरुस्त करना हमारी ज़िम्मेदारी है।

इसके लिए एक बीच का रास्ता और एक मुक्तिदाता की भूमिका आज के दौर में हमें अपनाने की ज़रूरत है। इसके लिए सबसे पहले हमें इन्साफ़ का झंठावाहक बनना चाहिए। जहां कहीं भी ज़ुल्म होता हो, हमें ज़ुल्म के ख़िलाफ़ आवाज़ उठानी चाहिए, लेकिन आवाज़ कैसे उठाएं? पहले तो हमें हालात की पूरी जानकारी हो। हम उड़ती-उड़ती बातों को लेकर न उड़ें। इधर-उधर की बातों में आकर हम बड़ी-बड़ी बातें करने से बचें। इन्साफ़ का झंडावाहक बनने का मतलब यह है कि हमें सही-सही सूरतेहाल की पूरी जानकारी हो। बग़ैर जांचे परखे यदि हम कोई आवज़ उठाते हैं तो यह हमारी ग़लती होगी। हर हाल में इन्साफ़ की बात होनी चाहिए। किसी की दुश्मनी हमें इतना अंधा न कर दे कि हम हक़ बात से हट जाएं और नाइन्साफ़ी की बातें करने लग जाएं।

दूसरी बात यह कि हम अपना एजेंडा ख़ुद तय करें। हम अपनी सलाहियतों को बढ़ाएं, दूसरों के एजेंडे से प्रभावित न हों और उनके दिए हुए एजेंडे पर हम काम न करें। इस देश के ज़्यादातर लोग अच्छे हैं, यहां क़ानून और संविधान है, जिसमें मज़हब की आज़ादी है। इस देश में मज़हब को अपनाने, अपने मज़हब पर चलने और उसका प्रचार करने की आज़ादी है। यहां न्यापालिका और अदालतें मौजूद हैं। यहां कोई भी अप्रिय घटना होती है, तो क़ानून की लड़ाई लड़नी चाहिए। हमें क़ानून को हाथ में नहीं लेना है। हमें क़ानून के ज़रिये ही मामलों को हल करना चाहिए। हमें बेकार के मामलों में उलझने की ज़रूरत नहीं है। जहां कहीं भी कोई इन्सान ज़ुल्म का शिकार हो, तो उसे ज़ुल्म से बचाने के लिए क़ानूनी चाराजोई करने की ज़रूरत है।

हमें हालात का सही अंदाज़ा लगाकर होशमंदी के साथ ठोस रणनीति अपनाकर आगे बढ़ना चाहिए। ■■

(एस॰ अमीनुल हसन के संबोधन का ये सारांश सुफ़ियान अहमद ने तैयार किया है)

हम अपनी सलाहियतों को बढ़ाएं, दूसरों के एजेंडे से प्रभावित न हों और उनके दिए हुए एजेंडे पर हम काम न करें। इस देश के ज़्यादातर लोग अच्छे हैं, यहां क़ानून और संविधान है, जिसमें मज़हब की आज़ादी है। इस देश में मज़हब को अपनाने, अपने मज़हब पर चलने और उसका प्रचार करने की आज़ादी है। यहां न्यापालिका और अदालतें मौजूद हैं। यहां कोई भी अप्रिय घटना होती है, तो क़ानून की लड़ाई लड़नी चाहिए। हमें क़ानून को हाथ में नहीं लेना है। हमें क़ानून के ज़रिये ही मामलों को हल करना चाहिए।

इबारत



डॉ. अब्दुल रशीद
अगवान

सेकुलर दौर में धर्म



धार्मिक लोग दो तरह के होते हैं, एक सच्चे धार्मिक और एक पाखंडी जो धर्म की आड़ में अपने स्वार्थ पूरे करते हैं।

पाखंड, निफ़ाक़ या हाईपोक्रेसी का आज इस तरह बोल-बाला है कि सच्चे धार्मिक लोग पाखंडियों या मुनाफिक़ों को भी सच्चा धार्मिक समझने लगते हैं और इसीलिए या तो उनके गुनाहों पर चुप रहते हैं या भरमा कर उनके पीछे चलने लगते हैं। नतीजा यह होता है कि ख़ुद उनके नेक काम भी नष्ट हो जाते हैं और वे भी पाखंड के समर्थक बन जाते हैं।

दुनिया की चार अहम धार्मिक परम्पराओं को देखें तो पाखंड की वजह से धर्म की एक घटिया और डरावनी तस्वीर बनती है। यहूदियत के नाम पर इजरायल में, ईसाइयत के नाम पर सेंट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक में, इस्लाम के नाम पर कुछ मिडिल ईस्ट देशों में, बौद्धिज़्म के नाम पर म्यान्मार और श्रीलंका में और हिंदुत्व के नाम पर भारत में जिस तरह से हिंसा और नफरत को बढ़ावा मिल रहा है उसे देख कर आज के नवजवानों की धर्म के ख़िलाफ़ बेज़ारी समझ में आती है।

इन हालात में आज की नवजवान पीढ़ी धर्म से दूर भागने लगी है। ख़ुद को अधार्मिक (unaffiliated, nones) कहने वाले लोगों की आबादी पिछले कुछ सालों में काफी बढ़ी है। नेशनल ज्योग्राफिक ने अपने 2016 के एक आर्टिकल का हेडिंग लगाया था, "दुनिया में सबसे तेज़ी से बढ़ने वाला धर्म-अधर्म"। यह अधार्मिक आबादी आमतौर पर कम्युनिस्ट या नास्तिक विचारधाराओं से जुड़े लोगों के अलावा

धर्म प्रधान देशों में भी है। पाखंड को भी अधर्म में शामिल करने पर यह आबादी और बड़ी हो जाएगी। सच्चाई यह है कि सच्चे धार्मिक लोग हर जगह अल्पसंख्यक होते जा रहे हैं।

अमेरिका में nones (अधार्मिक) की रिकार्ड की गई आबादी कुल आबादी का 21% है। भारत में 2001 से 2011 तक ऐसे लोगों की आबादी चार गुना से ज़्यादा बढ़ चुकी है। युरोप के अक्सर चर्च वीरान पड़े हैं। मुस्लिम देशों में ईरान और तुर्की को छोड़कर कहीं भी धार्मिक पार्टियां कामयाब नहीं हो पाई हैं। इस बारे में प्यू रिसर्च सेंटर के डेटा बहुत कुछ कहते हैं। इस सेंटर का मानना है कि 2020 में दुनिया में अधार्मिक लोगों की आबादी विश्व की कुल आबादी का तक़रीबन 16% हो चुकी है यानी 1.28 अरब। यह भारत की विशाल आबादी के लगभग बराबर है।

इस सूरतेहाल में सच्चे धार्मिक लोगों का एक बड़ा रोल है।

सबसे पहले तो वे अपने आसपास फैले धर्म और अधर्म को अलग-अलग करें। इसका सबसे आसान तरीक़ा यह है कि धर्म की मोटी मोटी पहचानों, लक्षणों और ख़ूबियों पर ग़ौर करें जैसे सत्य, दया, बराबरी, आज़ादी, भाईचारा, संयम, वग़ैरह। जिन लोगों और संगठनों में ये मिलें वे धार्मिक या दीनदार हैं वरना पाखंडी या मुनाफिक़। चोले का रंग देखने के बजाय चोले के पीछे क्या है यह देखा जाए तो सच्चाई सामने आ जाएगी।

यह बात सभी तरह की परम्पराएं कहती हैं कि धर्म की सबसे बड़ी पहचान सत्य, हक़ या ट्रूथ है।

आज के दौर में सत्य का सबसे बड़ा दुश्मन प्रोपेगंडा है। यह प्रोपेगंडा अफ़वाहों से, पेड न्यूज़, आईटी सेल और ग़ुलाम चैनल के ज़रिये, नस्लवादी-जातिवादी सियासत को बढ़ावा देने वाले नेताओं की तक़रीरों और इतिहास को कहानी बनाने वाले स्कॉलर के बयानों में देखा जा सकता है। ये सभी अधर्म के सेवक हैं और अपने अपने स्वार्थ पूरे करने में जुटे हुए हैं। और ऐसे ही लोग धर्म और सच्चे धार्मिक लोगों के असल दुश्मन हैं।

आज दुनिया में अक्सर सरकारें सेकुलर लोग चला रहे हैं। वे पाखंड और पेड मीडिया के ज़रिये अपनी एक अच्छी तस्वीर बनाए हुए हैं। वे धार्मिक तनावों में ख़ुद को निष्पक्ष बनाकर पेश करते हैं, हालांकि उनका झुकाव उस तरफ़ ही रहता है जो उनकी सत्ता को मज़बूत करे। उनमें से अक्सर धर्म के किसी लक्षण या पहचान के पैमाने पर सही साबित नहीं होंगे।

उनकी सियासत प्रोपेगंडा और लोगों को बांट कर ही चल सकती है। अगर किसी नेता या संगठन का एक भी झूठ सामने आ जाए या उसके अंदाज़ में लोगों को आपस में लड़ाने का मंसूबा शामिल हो तो फिर उसे धार्मिक मानने की भूल करने वाले लोग दुनिया में जारी पाखंडी तंत्र का हिस्सा बनकर अपने ही धर्म को नुक़सान पहुंचाते हैं।

अब यह सच्चे धार्मिक लोगों की ज़िम्मेदारी है कि वे एक दूसरे से जुड़ें, एक दूसरे को जानने की कोशिश करें, धर्म का तुलनात्मक अध्ययन करें, अच्छे कामों में आपस में सहयोग करें और किसी तरह के प्रोपेगंडा और हिंसा का हिस्सा न बनें वरना उनके पास धर्म के नाम से जो कुछ भी पूंजी है वह भी पाखंड की भेंट चढ़ जाएगी और दुनिया वहशत का घर बन जाएगी। ■■

अब यह सच्चे धार्मिक लोगों की ज़िम्मेदारी है कि वे एक दूसरे से जुड़ें, एक दूसरे को जानने की कोशिश करें, धर्म का तुलनात्मक अध्ययन करें, अच्छे कामों में आपस में सहयोग करें और किसी तरह के प्रोपेगंडा और हिंसा का हिस्सा न बनें वरना उनके पास धर्म के नाम से जो कुछ भी पूंजी है वह भी पाखंड की भेंट चढ़ जाएगी और दुनिया वहशत का घर बन जाएगी।



सद्भावना



रेडियो जॉकी
नवेद

सद्भावना का सोशल ऑडिट

मैं ज़्यादा कुछ नहीं जानता हूं, क्योंकि जब मैंने रेडियो शुरू किया था तो मेरा काम यह था कि मैं लोगों को हंसाऊं और मैं आज भी यही कोशिश करता हूं कि लोगों को हंसाऊं, उनसे बातचीत करूं, किसी तरह उनमें ख़ुशी पैदा करूं, जोकि हो भी रहा है, लेकिन दुर्भाग्यवश कुछ चीज़ें ऐसी होती हैं, जिनसे मजबूर होकर मुझे कुछ करना होता है। एक चीज़ बहुत ही स्पष्ट है कि सद्भावना, शान्ति और सुकून की कोई क्लास नहीं होती है। यह चीज़ मुझे मेरे घर पर ही सिखाई गई थी।

रेडियो मिर्ची ने कभी मुझसे यह नहीं कहा था कि तुम माइक पर जाकर यह बोलना कि मुसलमानों को हिंदुओं से मुहब्बत करनी चाहिए या फिर हिंदुओं को मुसलमानों से मुहब्बत करनी चाहिए, यह मुझे पहले से ही मालूम था। अफ़सोस इस बात का होता है कि जो लोग इस बात को नहीं समझते वे यह ख़ूब समझते हैं कि ये काम करने से उनके बहुत बड़े-बड़े फ़ायदे होते हैं और मुझे अफ़सोस इस बात का भी होता है कि जो लोग इनकी बातों में आते हैं वे इस दुनिया के सबसे बड़े बेवकुफ़ लोग होते हैं।

एक बार हम हिडन कैमरा लेकर दिल्ली की दो जगहों पर गए थे, इन दोनो जगहों में से एक पूरी तरह से मुस्लिम बाहुल्य इलाक़ा था और दूसरा पूरी तरह से हिंदू बाहुल्य इलाक़ा था। एक निज़ामुद्दीन मरकज़ था, जहां पर ज़्यादातर जमातें जाती हैं और दूसरा कालका जी मंदिर का इलाक़ा था।

जब मैं निज़ामुद्दीन मरकज़ गया था तो, वहां मैंने अपना भेस ऐसा बनाया था कि मैं और ज़्यादा मुसलमान लगूं। मैंने दाढ़ी लगाई थी, मैंने टोपी और कुर्ता-पजामा पहना हुआ था। वहां पर जितने दुकानदार थे मैं उनसे मिला, मैंने सलाम किया और सलाम करने के बाद मैंने उनसे कहा कि मैं आप लोगों से बात करना चाहता हूं। अचानक मैंने अपना झूठा फोन बजाकर फोन पर बात करने लगा और मैंने कहा- ''जावेद साहब ! हालात देख रहे हैं



मुल्क के, यह मुसलमान अगर एक हो जाए और ठान ले तो फिर हिंदू कितने ही हों। हम तो ऐसे हैं कि हम तो फिर जिहाद करते हैं, फिर हम देखते थोड़े हैं।''

आप यक़ीन करिए ! मैंने जितने मुसलमान लोगों के सामने यह कहा, उन्होंने मुझे इतनी बुरी-बुरी सुनाई कि मैंने ज़िन्दगी में कभी इतनी बुरी नहीं सुनी और यह पहली बार हुआ कि मैं जितनी गालियां खाता था, मुझे उतनी ज़्याद ख़ुशी होती थी कि सामने मुहब्बत है।

इसी तरह कालका जी मंदिर जाकर मुझे ज़्यादा अच्छा लगा। मैंने फिर अपना भेस बदला, एक गुलाबी सा कुर्ता पहला और तिलक लगाया। ठीक वैसे ही मैंने यहां भी अपना झूठा फोन उठाया और कहा-''शंकर जी! यह देश तो हमारा है, अगर हम एक हो जाएं, तो फिर मुसलमान हैं कितने? गिने चुने मुसलमान हैं, पाकिस्तान भेज देंगे पता भी नहीं चलेगा।''

निज़ामुद्दीन से ज़्यादा झाड़ मुझे वहां पड़ी थी। लोगों ने कहा कि हिंदू धर्म तुझे ये सिखाता है कि तू अपने भाई को मारे,

मैं आप सबसे सिर्फ़ यह कहना चाहता हूं कि ये बहुत कम लोग हैं, जो हममें दूरियां पैदा करना चाहते हैं और हम बहुत सारे लोग हैं, जो एक साथ रहना चाहते हैं। बहुत अफ़सोस होगा मुझे कि हम बहुत सारे होकर अगर हार गए। मुझे इस बात की उम्मीद है कि आने वाले वक़्त में इन्शाअल्लाह हम एक दूसरे को समझेंगे।

हिंदू धर्म तुझे ये सिखाता है कि तू उनसे नफ़रत करे। मुझे धक्का देकर सीढ़ियों से नीचे गिरा दिया था और मुझे जब चोट लगी थी तो मुझे ख़ुशी हुई थी कि मुहब्बत है यहां पर।

मैने एक जोखिम भरा काम किया था। मुझे इस बात का डर था कि कहीं लोग मुझे मारें ना, लेकिन मुझे इस बात की बेहद ख़ुशी हुई कि इस मैसेज को इतने ज़्यादा लोगों ने पसंद किया और देखा कि आज मुझे चौदह साल हो गए रेडियो करते हुए, चौदह साल का रेडियो एक तरफ़ और यह सोशल एक्सपेरिमेंट एक तरफ़ जोकि हिंदू-मुस्लिम को लेकर हुआ था।

मुझे बड़ी ख़ुशी होती है, जब मुझे रेडियो शो में लोग कहते हैं कि नवेद मैं अनवर बोल रह हूं और मेरा बेटा बीमार है और उसे ख़ून चाहिए। आप यक़ीन करिए मैं एक अनाउंसमेंट करता हूं और अनवर के बेटे की मदद करने मुसलमानों से ज़्यादा हिंदू पहुंच जाते हैं। मैं आप सबसे सिर्फ़ यह कहना चाहता हूं कि ये बहुत कम लोग हैं, जो हममें दूरियां पैदा करना चाहते हैं और हम बहुत सारे लोग हैं, जो एक साथ रहना चाहते हैं। बहुत अफ़सोस होगा मुझे कि हम बहुत सारे होकर अगर हार गए। मुझे इस बात की उम्मीद है कि आने वाले वक़्त में इन्शाअल्लाह हम एक दूसरे को समझेंगे। ■■

ज्वलंत

संपादन प्रभाग

कस्टडी में मौत : पुलित तंत्र की संवेदनशीलता का प्रश्न

हमारे देश में पुलिस की कार्यशैली पर हमेशा से ही सवाल उठते रहे हैं। थानों और थानों के बाहर लोगों का उत्पीड़न, यातना और अत्याचार आदि मामलों में पुलिस हमेशा से ही सवालों के घेरे में रही है। बड़े पैमाने पर लोगों में पुलिस और उसकी कार्यशैली को लेकर एक नकारात्मक छवि बनी हुई है। ग़ौरतलब है कि बीते अगस्त माह में भारत के प्रधान न्यायाधीश एनवी रमण ने पुलिस की कार्यशैली पर सवाल खड़े करते हुए थानों में मानवाधिकारों के हनन को लेकर अपनी चिंता ज़ाहिर की थी। उनका कहना था कि मानवाधिकारों के हनन का सबसे ज़्यादा ख़तरा पुलिस थानों में है। उन्होंने इस गंभीर मामले के एक अहम पहलू का उल्लेख करते हुए यहां तक कहा था कि जो लोग विशेषाधिकार वाले हैं, उन्हें भी थर्ड डिग्री ट्रीटमेंट से नहीं छोड़ा जाता। मानवाधिकार और शारीरिक सुरक्षा को सबसे ज़्यादा ख़तरा देश के पुलिस थानों में है।



पुलिस द्वारा प्रताड़ना, यातना, हिरासत में मौतें और अन्य अत्याचार हमारे देश में गंभीर रूप से विद्यमान हैं। हाल में ही उत्तर प्रदेश के आज़मगढ़ और कासगंज की घटनाएं पुलिसिया अत्याचार की ताज़ा मिसालें हैं। आमतौर पर पुलिस सेवा भाव की जगह रौब, बल प्रयोग और मनमानी के आधार पर कार्य करती है, जो कि 'विधि के शासन' और मानवाधिकार के लिए एक बड़ा ख़तरा

है। संवैधानिक प्रावधानों और गारंटियों के बावजूद पुलिस द्वारा मनमानी, बल प्रयोग और रिपोर्ट दर्ज न किए जाने की प्रवृत्ति पर रोक नहीं लग पाई है। कुछ वर्ष पहले गृह मंत्रालय ने थानों की कार्यशैली को लेकर एक नमूना सर्वेक्षण करवाया था। इस सर्वे में महिलाओं, बुज़ुर्गों और युवाओं सहित लगभग 5,641 नागरिकों को शामिल करके उनसे पुलिस की कार्यशैली के बारे में राय मांगी गई थी, जिसमें 50 प्रतिशत से अधिक लोगों ने पुलिस की कार्यशैली के प्रति अपना असंतोष व्यक्त किया था।

किसी स्वतंत्र देश एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए इससे बड़ी विडम्बना और क्या हो सकती है कि जिस पुलिस पर देश के नागरिकों की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी है उसी पुलिस पर देश के नागरिकों को भरोसा नहीं है। यह बेहद शर्मनाक स्थिति है। ग़ौरतलब है कि जिन लोगों को पुलिस अपनी गिरफ़्त में लेती है, उनके अपराधी होने का संदेह भले हो, लेकिन उनका अपराध साबित नहीं हुआ होता है, इसलिए उनके साथ क्रूर व्यवहार की अनुमति हमारा संविधान नहीं देता, जबकि पुलिस के क्रूरतापूर्ण एवं अमानवीय व्यवहार के किस्से हमारे देश में आए दिन सामने आते रहते हैं। जिस पुलिस पर विधि का शासन सुनिश्चित कराने की ज़िम्मेदारी है उसी पुलिस के द्वारा नियमों एवं क़ानूनों की धज्जियां उड़ाना आम बात है, मानो सारे नियम व क़ानून पुलिस अपनी जेब में लेकर घूमती हो।

इसके अलावा पुलिस हिरासत में होने वाली मौतें भी एक गंभीर समस्या है। केंद्रीय गृह मत्रालय के अनुसार, देश में पिछले तीन वर्षों में पुलिस हिरासत में 348 लोगों की मौत हुई और 1,189 लोगों को यातनाएं दी गईं। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग लंबे समय से हिरासत में होने वाली मौतों पर अपनी चिंता और क्षोभ ज़ाहिर करता रहा है। इस संबंध में राष्ट्रीय मानवाधिकार के आंकड़े हैरान करने वाले हैं। आंकड़ों के अनुसार पिछले एक दशक में मार्च 2020 तक लगभग 17146 लोग न्यायिक और पुलिस हिरासतों में मारे गए। औसत हर रोज़ पांच मौतों का आता है। इनमें से 92 प्रतिशत मौतें 60 से 90 दिनों की अवधि वाली न्यायिक हिरासतों में हुई थीं। बाकी मौतें उन पुलिस हिरासतों में हुईं जो 24 घंटे की अवधि की होती हैं या मजिस्ट्रेट के आदेश पर 15 दिन तक बढ़ायी जा सकती हैं।

हिरासत में यातना, उपेक्षा, तिरस्कार और मौतों के डरावने आंकड़ों के बीच एक चिंताजनक तथ्य यह भी है कि पुलिस अत्याचार के शिकार तथा जेलों में बंद क़ैदियों और विचाराधीन क़ैदियों में सबसे अधिक संख्या ग़रीबों, दलितों, पिछड़ों और मुसलमानों की है। इसलिए दलित व कमज़ोर वर्गों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए ज़रूरी है कि पुलिस जांच और पूछतांछ की प्रक्रिया को पारदर्शी बनाते हुए उसमें आमूलचूल बदलाव किया जाए। हिरासत में मौतों को लेकर एक मज़बूत क़ानून बनना चाहिए।

अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि इससे पुलिस पर अनावश्यक दबाव बढ़ेगा और अपराधियों को बल मिलेगा, लेकिन एक समुचित एवं पारदर्शी व्यवस्था के दावे में ऐसे तर्क का कोई अर्थ नहीं है। पुराने औपनिवेशिक दौर के पुलिस क़ानूनों को बदल कर पुलिस तंत्र के ढांचे में बदलाव ज़रूरी है। इस ढांचे को पुलिस की आंतरिक आवश्यकताओं एवं लोगों के मानवाधिकार के अनुसार ढालना होगा न कि सरकारों और राजनीतिक दलों के हितों के अनुसार।

अक्सर ऐसा देखने में आता है कि निचले स्तर के पुलिस कर्मियों का व्यवहार लोगों के प्रति बहुत ख़राब होता है। कई बार यह भी देखने में आता है कि पुलिस अधकिारी हिरासत में मौत के मामले को दबाने का प्रयास करते हैं। हिरासत में प्रताड़ना और मौतों के संबंध में जानकारों का कहना है कि इसके कई कारण हो सकते हैं, लेकिल एक बात तो साफ़ है कि इन मामलों में पुलिस की ओर से लापरवाही होती है, तभी ऐसी घटनाएं होती हैं।

कुछ मामले ऐसे भी होते हैं, जिनमें आरोपी की तबियत ख़राब होने के कारण उसकी मौत हो जाती है। कुछ मामले आत्महत्या के भी होते हैं। कई बार आरोपी की पिटाई की वजह से भी उसकी मौत हो जाती है। इन बिंदुओं पर ध्यान दिया जाए तो हिरासत में मौत के मामलों में कमी आ सकती है।

पुलिस सुधार को लेकर हमारे देश में कई बार सुधार कमेटियों की ओर से सुझाव दिए जाते रहे हैं, जिसमें पुलिस हिरासत में मौतों एवं अत्याचार को रोकने के सुझाव भी शामिल थे। अतः अब यह ज़रूरी हो गया है कि उन सुझावों को अमल में लाया जाए। नियम क़ायदों में सुधार के अलावा यह भी ज़रूरी है कि पुलिस के उच्च अधिकारियों और उनके मातहतों को मानवाधिकारों के प्रति संवेदशील व सजग बनाने के लिए ठोस क़दम उठाए जाने के साथ-साथ मानवाधिकार आयोगों को भी और अधिक अधिकार संपन्न और प्रभावी बनाया जाए।हमारे देश में जब तक पुलिस की कार्यशैली में सुधार नहीं किया जाता तब तक 'विधि का शासन' पूरी तरह लागू नहीं हो पाएगा। ■■



शिक्षा विमर्श



सआदत हुसैन
ख़लीफ़ा

NEET : एक महाकथा की विफलता की गाथा

पिछले कुछ हफ्तों से, तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एमके स्टालिन राज्य में राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा (NEET) को ख़त्म करने के लिए सक्रिय रूप से ज़ोर दे रहे हैं। हालांकि सीएम का यह क़दम काफ़ी देर से आया है। यह तब आया जब इसे वापस लेने की मांग कर रहे कई छात्रों ने आत्महत्या कर ली।सेलम के एक 19 वर्षीय धनुष ने आत्महत्या कर ली और अरियालुर की कनिमोझी की मृत्यु हो गई।

कुछ दिनों पहले, चेंगलपट्ट के एक छात्र के अनु, जिसने सितंबर में आत्महत्या का प्रयास किया था, ने दम तोड़ दिया। मगर अब भी, कई, जिनमें राष्ट्रीय स्तर पर सत्तारूढ़ दल और राज्य में विपक्ष (जैसे तमिलनाडु भाजपा के एच राजा) शामिल हैं, नीट के ज़ोरदार समर्थक हैं।वास्तव मे,सितंबर 2017 में एस. अनीता की आत्महत्या ने, जिसने अपनी 12 वीं की परीक्षा में 1176/1200 अंक प्राप्त किए थे, NEET के ख़िलाफ़ एक आंदोलन को जन्म दिया। अब, द्रमुक मंत्रियों और प्रतिनिधियों के संग केटी रामा राव, पिनाराई विजयन, नवीन पटनायक और जगन मोहन रेड्डी सहित अन्य विपक्षी मुख्यमंत्रियों के साथ आने के बाद, यह मुद्दा राष्ट्रीय स्तर पर जोर पकड़ रहा है। पिछले महीने, डीएमके ने भी मद्रास उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की है, जिसमें 42 वें

संशोधन की धारा 57 को चुनौती दी गई है, जिसके तहत शिक्षा को राज्य सूची से समवर्ती सूची में स्थानांतरित कर दिया गया।

न्यायमूर्ति एके राजन समिति की रिपोर्ट के कुछ बिन्दु:

जस्टिस एके राजन कमेटी की रिपोर्ट दिलचस्प पाठ कराती है जो संघवाद (federalism), मानकीकृत परीक्षण (standardized testing), पूर्वाग्रह, स्वास्थ्य सेवा में ग्रामीण-शहरी विभाजन और रिपोर्ट के अध्याय 8 के बारे में सवाल उठाती है।रिपोर्ट में उठाए गए कुछ कानूनी प्रश्न, सार्वजनिक स्वास्थ्य,अस्पताल (जोकि राज्य का विषय हैं) और ग्रामीण छात्रों का मेडिकल कॉलेजों में प्रवेश की आवश्यकता तथा मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों के अस्पतालों में प्रशासन और काम करने से संबंधित हैं। ऐसे छात्रों को नीट की 'मेरिट' सूची में कोई स्थान नहीं मिलता है,जो इन क्षेत्रों से आते हैं।

दूसरे, रिपोर्ट ने 'जगदीश सरन बनाम भारत संघ' के हवाले से 'योग्यता' के झूठे दावे पर भी प्रश्न उठाया है जो केवल संख्याओं में मापा जाता है और कुछ ऐसा बताया जाता है जिसमें पिछड़े वर्ग के छात्रों में कमी दिखाई देती है। उद्धरण-"यदि ग्रामीण सेवा की क्षमता या पिछड़े लोगों के बीच चिकित्सा पर ध्यान देना, योग्यता का मानदंड है-और निस्संदेह बीमारी और दुख, उपेक्षा और गरीबी, विलाप और आँसू इन्ही पिछड़े क्षेत्रों में हैं तो, निश्चित रूप से एक वंचित क्षेत्र के छात्रों के लिए ये एक प्लस पॉइंट है। उत्कृष्टता (excellence)तो मिली जुली है पर हृदय और उसकी संवेदनशीलता शैक्षिक मूल्यों के मामले में उतनी ही कीमती है...योग्यता को केवल अंकों के संदर्भ में नहीं मापा जा सकता है, मानवीय सहानुभूति भी उतनी ही महत्वपूर्ण है"। पिछड़े वर्ग और हाशिए के छात्रों को उनकी पृष्ठभूमि के कारण 'योग्यता' की कमी के रूप में देखा जाता है।कई मामलों में, NEET ने छात्रों को बमुश्किल पास-अंकों के साथ निजी सीटों पर भर्ती कराया है, जैसा कि रिपोर्ट में उद्धृत किया गया है। जैसा कि रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है, "एनईईटी से पहले और एनईईटी के बाद की अवधि के बीच डॉक्टरों की प्रोफाइल बदलने के संकेत हैं, मुख्य रूप से विशेषाधिकार प्राप्त समुदायों से डॉक्टरों और शिक्षण संकायों की एक पीढ़ी बनाना-समृद्ध, मलाईदार, शहरी जो विविध सामाजिक संरचना की ज़मीनी हक़ीक़त से काफ़ी दूर हैं।" (पी 110)।

एक वर्ग प्रणाली का निर्माण

रिपोर्ट का सबसे नाटकीय और खुलासा करने वाला डेटा सीबीएसई, अंग्रेजी माध्यम और निजी स्कूल के छात्रों की परीक्षा में सफलता के साथ-साथ 'रिपीटर्स' और कोचिंग लेने वालों की प्रतिशत में देखा जा सकता है। एनईईटी की शुरुआत के कारण, वर्ष 2020 में एचएससी (राज्य बोर्ड) 12 वीं कक्षा के छात्रों की कुल संख्या गिरकर 779940 हो गई। 2017 और 2020 के बीच, छात्रों की संख्या 113,322 के नुक़सान के साथ घटकर 12.7% हो गई है,नीट के बाद की अवधि में । शोषक कोचिंग उद्योग ने एक छात्र के लिए इस तरह की परीक्षा को स्वतंत्र रूप से पास करना लगभग असंभव बना दिया है...।

वे यह भी जानते हैं कि छात्र और उनके माता-पिता भी अच्छी तरह जानते हैं कि बिना कोचिंग के परीक्षा पास करना लगभग असंभव है। कोचिंग उद्योग बिना किसी झिझक के इस तथ्य को खूब भुनाता है, 'क्रैश कोर्स' और 'रिपीटर्स' के लिए पाठ्यक्रमों की पेशकश करता है, उन लोगों को लक्षित करता है जिन्होंने पहले प्रयास में परीक्षा पास नहीं की है। 'एमबीबीएस कार्यक्रम में प्रवेश प्राप्त करने वाले पुनरावर्तकों का प्रतिशत 2020-21 में बढ़कर 71.42 प्रतिशत हो गया, जो 2016-17 में मात्र 12.47% था।' (पृष्ठ 23)।रिपोर्ट के मुताबिक़ ऐसे रिपीटर्स औसतन सिर्फ कोचिंग के लिए 10 लाख रुपये ख़र्च करते हैं। कोचिंग उद्योग ऐसी स्थिति पैदा करता है जहां 'uncoached' जोखिम में हैं और वंचित हैं। कोचिंग उद्योग, जो पहले से ही जेईई और अन्य परीक्षाओं में फल-फूल रहा है, अब और बढ़ गया है, अब लगभग 5750 करोड़ रुपय इंडस्ट्री की आय है। फिर, NEET योग्यता को मापता नहीं है, बल्कि केवल यह सुनिश्चित करता है कि छात्र छोटी अवधि में सामग्री को याद रखें।

दक्षता के झूठे दावे

एनईईटी के समर्थकों ने तर्क दिया है कि बोर्ड परीक्षाओं पर निर्भर होने के बजाय, प्रवेश परीक्षाएं छात्रों को प्रीमियम संस्थानों में प्रवेश करने का एक 'दूसरा मौक़ा' प्रदान करती हैं, न कि पूरी तरह से एकल प्रदर्शन द्वारा सीमित होना। हालाँकि, रिपोर्ट द्वारा सही ढंग से उठाया गया मुद्दा यह है कि वास्तव में दूसरा मौका होने के बजाय, NEET जैसी प्रतियोगी परीक्षाएं केवल 'दोहरी कठिनाई' बन जाती हैं क्योंकि वे स्कूली परीक्षाओं में पेश किए जाने वाले प्रारूपों से मौलिक रूप से भिन्न नहीं होती हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका में यूसीएटी और एमसीएटी के विपरीत, जो योग्यता को मापने के लिए अद्वितीय और सुसंगत तरीके प्रदान करते हैं, "नीट, बोर्ड परीक्षाओं (राज्य बोर्ड और सीबीएसई दोनों) की नकल करता है, क्योंकि यह उसी मानकीकृत मानदंड-संदर्भित परीक्षण(standard-ized criteria-referenced test)का उपयोग कर छात्रों का मूल्यांकन करता है जैसा कि बोर्ड परीक्षा में होता है। " (पी 20)। इसका मतलब यह है कि एनईईटी न केवल बोर्ड परीक्षाओं से भिन्न नहीं है, बल्कि यह दोहराव और दोहराव वाली परीक्षाओं को अपने आप में दोहराए जाने के कारण बदलने के अपने उद्देश्य को भी नकार देता है। इस प्रकार, NEET किसी भी उद्देश्य को पूरा नहीं करता है जिसके साथ इसे स्थापित किया गया था।गुणवत्ता में वृद्धि(कई छात्र केवल पास अंकों के साथ निजी NEET सीटें हासिल कर रहे हैं) पारदर्शिता (सार्वजनिक क्षेत्र में विश्वसनीयता, पूर्वाग्रह मुक्त प्रकृति या परीक्षा की वैधता के बारे में नीट के हवाले से बहुत कम जानकारी उपलब्ध है, संयुक्त राज्य अमेरिका में एसएटी के विपरीत, जिनका भारी परीक्षण किया गया और त्रुटिपूर्ण पाया गया); कैपिटेशन शुल्क को हटाना (निजी चिकित्सा संस्थान प्रति वर्ष 30 लाख रुपये तक शुल्क लेते हैं), और कई परीक्षाओं से बचना। टूटी हुई स्वास्थ्य सेवा प्रणाली के लिए आगे का रास्ता?

इस प्रकार, दुविधा बनी हुई है- क्या बोर्ड परीक्षा के माध्यम से प्रवेश एक उचित तरीका है?या राज्य स्तरीय प्रवेश परीक्षा होना बेहतर है? हालांकि, एनईईटी की तुलना में, रिपोर्ट स्पष्ट डेटा दिखाती है कि प्री-एनईईटी अवधि के दौरान एचएससी अंकों के माध्यम से प्रवेश ने गुणवत्तापूर्ण और मेधावी छात्रों के प्रवेश को सुनिश्चित किया है। यह एक बहुत व्यापक बहस है जिसमें हर स्तर पर परीक्षा प्रणाली के भीतर गहरे सड़न को दूर करने की आवश्यकता है। जस्टिस एके राजन को एनईईटी की जांच करने का अधिकार दिया गया था, और रिपोर्ट में ठोस आंकड़ों के साथ बेहिचक शब्दों में जवाब दिया गया है कि एनईईटी किसी भी तरह से पूर्वाग्रह से मुक्त परीक्षा नहीं है।

छात्रों के भविष्य और उत्कृष्ट शिक्षा प्रणाली के साथ कोई समझौता नहीं किया जा सकता है। जैसा कि रिपोर्ट दर्शाती है, राष्ट्रीय चिकित्सा आयोग अधिनियम 2019 के लगभग सभी लक्ष्य-"गुणवत्ता और सस्ती चिकित्सा शिक्षा तक पहुंच, समान और सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल, चिकित्सा संस्थानों का पारदर्शी मूल्यांकन, चिकित्सा रजिस्टर का रखरखाव, चिकित्सा सेवाओं में नैतिक मानकों, और एक शिकायत तंत्र" (पी 6) - अधूरे वादे बने रहे। महामारी ने हमें सिखाया होगा कि स्वास्थ्य सेवा केवल तभी सुलभ है जब यह सभी के लिए हो और जब यह सस्ती हो। एनईईटी स्वास्थ्य सेवा प्रणाली से वास्तविक उम्मीदवारों को बाहर निकाल देता है, इससे पहले कि वे इसमें पहला क़दम रखते हैं। विपक्षी नेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं और नागरिक समाज के आंदोलनों को इस मुद्दे को तमिलनाडु राज्य से परे व्यापक स्तर पर उठाने की आवश्यकता है, न केवल एनईईटी को निरस्त करने के लिए बल्कि भारतीय शिक्षा और स्वास्थ्य प्रणाली की सड़ांध ख़त्म करने के लिए और इन्हें समग्र रूप से बदलने के लिए। ■■

एनईईटी के समर्थकों ने तर्क दिया है कि बोर्ड परीक्षाओं पर निर्भर होने के बजाय, प्रवेश परीक्षाएं छात्रों को प्रीमियम संस्थानों में प्रवेश करने का एक 'दूसरा मौक़ा' प्रदान करती हैं, न कि पूरी तरह से एकल प्रदर्शन द्वारा सीमित होना। हालाँकि, रिपोर्ट द्वारा सही ढंग से उठाया गया मुद्दा यह है कि वास्तव में दूसरा मौका होने के बजाय, NEET जैसी प्रतियोगी परीक्षाएं केवल 'दोहरी कठिनाई' बन जाती हैं क्योंकि वे स्कूली परीक्षाओं में पेश किए जाने वाले प्रारूपों से मौलिक रूप से भिन्न नहीं होती हैं।

लघुकथा



ईश्वर दयाल
जायसवाल

फ़साद की फांस

नगर के प्रतिष्ठित सेठ बाबू अरुण लाल जी दूरस्थ रिश्तेदार के यहां जा रहे थे। यात्रा के दौरान एक शहर में जलपान करने की इच्छा से ड्राइवर से कार रोकने को कहा। ड्राइवर ने कार सड़क के किनारे खड़ी कर दी। कार जहां खड़ी की गई उसके पास कोई मज़हबी मजलिस का आयोजन किया जा रहा था। पुलिसकर्मी अपनी ड्यूटी पर मुस्तैद थे।

अरुण लाल जी जलपान करने रेस्टोरेन्ट में चले गए और ड्राइवर एक पान की दूकान पर पान-सिगरेट ख़रीदने लगा। इसी बीच एक बछिया कार के नीचे आकर बैठ गई थी। अरुण लाल जी जलपान करके कार में बैठ गए और ड्राइवर से कार को ले चलने के लिए कहा।

ड्राइवर ने कार को स्टार्ट करके ज्यों ही आगे बढ़ाने की कोशिश की, कार के नीचे से चिल्लाने की ज़ोरदार आवाज़ आई। उसने कार को बन्द करके नीचे देखा तो बछिया चिल्ला रही थी। परन्तु आस-पास के लोगों ने आकर कार को उठाया तो बछिया चिल्लाती हुई भाग गई। दो-एक पुलिसकर्मी भी कार के पास पहुंच गए। कार के नीचे से बछिया को भागते हुए देखा तो वे पुलिसकर्मी रोबदार आवाज़ में बोले-''गाड़ी को थाने ले चलिए।''

अरुण लाल जी ने कहा, ''क्यों ले चलूं।'' सिपाही ने कहा-''बछिया को कार के नीचे दबाकर कहते हो क्यों ले चलूं?''

अरुण लाल जी ने कहा, ''लेकिन बछिया को कुछ हुआ तो नहीं, वह तो भाग गई।''

सिपाही ने कहा, ''मैं यह सब सुनना नहीं चाहता। सीधे-सीधे थाने चलो। जो कहना होगा कोतवाल साहब से कहना।''

बुझे मन से मजबूरी वश अरुण लाल जी को कोतवाली जाना पड़ा। कोतवाल कहीं गश्त पर गए थे। अरुण लाल जी कोतवाली में तैनात अन्य पुलिसकर्मी से मान-मनव्वल करते रहे, कुछ ले-देकर इस मुसीबत से पिंड छुड़ाना चाहते थे। लेकिन वहां पर उनकी बात को कोई सुनने को तैयार नहीं था। बस एक ही जवाब था, ''कोतवाल साहब को आने दीजिए।''

एकाएक उन्हें ख़याल आया कि मेरे मित्र कैलाशनाथ की रिश्तेदारी तो यहीं पर है। उन्होंने झट मोबाइल से मित्र के रिश्तेदार सेठ अमरनाथ से सम्पर्क साधा और पूरे हालात से अवगत कराया।

अमरनाथ नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। वे थोड़ी देर में कोतवाली पहुंच गए। उसी समय कोतवाल साहब भी आ धमके।

कोतवाल साहब ने सेठ अमरनाथ जी को देखते ही बड़े विनम्र और शालीन भाव में कहा, ''अरे लाला जी आप! कैसे आना हुआ? मेरे लायक़ जो सेवा हो कहिए।''

सेठ अमरनाथ जी कुछ कहते, इसके पहले ही सिपाही बोल उठा, ''श्रीमान जी! ये साहब अरुण लाल जी की कार से बछिया दब गई है। बड़े ना-नुकर के बाद इनको यहां पर लाया हूं।''

कोतवाल साहब अरुण लाल जी के प्रति कठोर क़दम उठाते, इसके पहले ही अमरनाथ जी बोल पड़े ''कोतवाल साहब! ये मेरे रिश्तेदार के घनिष्ठ मित्र हैं।

कार के नीचे बछिया बैठी थी ज़रूर, लेकिन उसे कुछ हुआ नहीं है। वह तो तुरंत भाग खड़ी हुई। आपके मातहत बेवजह मामले को तूल देकर तिल का ताड़ बना रहे हैं?

कोतवाल साहब ने जब सेठ अमरनाथ जी की बात को सुना तो अपने मातहत सिपाही से बोले, ''क्यों जी! ये बात सच है?''

''हां हुज़ूर! बात तो यही है।'' सिपाही ने कहा।

कोतवाल साहब ने सिपाही को फटकार लगाई और अमरनाथ जी से क्षमा मांगते हुए, ''अरुण लाल जी को जाने के लिए कह दिया। अरुण लाल जी जान बची लाखों पाये मन ही मन सोचते हुए तुरंत ही ड्राइवर से बोले, ''जल्दी कार भगाओ।''

इधर अरुण लाल जी की कार बड़े स्पीड से शहर को छोड़ रही थी। दूसरी तरफ़ शहर में उतनी ही स्पीड से ''धार्मिक स्थल पर बछिया दब गई'' की अफ़वाह फैल रही थी। वातावरण में ''जय श्रीराम'' तथा ''अल्लाहु अकबर'' के नारे गूंजने लगे थे। ■■

कविता



शमीम अख़्तर

मानवता

वर्तमान स्थिति से प्रताड़ित
मानवता,
आबादी से दूर
किसी घर का द्वार खटखटाया,
भीतर से ध्वनि आई...कौन?
मैं मानवता हूं,
आहत हो गई हूं,
थक चुकी हूं,
अब मेरा कोई चाहने वाला नहीं।
अब मेरा कोई रखवाला नहीं।
चारों ओर हाहाकार है, मारामारी है,
जिधर देखो काला बाज़ारी है,
भाई-भाई के रक्त का प्यासा है।
मनुष्य-मनुष्य को देखना नहीं चाहता।
यही कारण है कि,
गोलियां चलती हैं,
बम गिराए जाते हैं,
हथियार अपनाए जाते हैं,
घर जलाए जाते हैं,
ख़ून की होली होती है
अब लोगों में वह प्रेम नहीं,
पूर्वजों की स्मृति का ध्यान नहीं,
क्या इसीलिए दुनिया अस्तित्व में आई थी?
मैं इन सबसे तंग आकर,
अन्याय से घबरा कर,
इधर निकल आई हूं,
निवास चाहती हूं
कोई अपना बना ले
अपने जीवन का सपना बना ले
क्या तुम अपनाओगे?
उत्तर मिला
हे मानवता,
मैं दरिद्र और कंगाल
क्या मेरी औक़ात, क्या मेरी मजाल
लोग मुझे घृणा की दृष्टि से देखते हैं
अपनी प्रतिष्ठा के गुणगान करते हैं
एक-दूसरे को बुरा-भला कहते हैं,
अब जबकि तुम
उस आबादी से उद्विग्न हो गई हो,
परेशान हो गई हो
तो आओ,
मेरा द्वार खुला है तुम्हारे लिए
आओ मेरे समीप आओ
आत्मसात हो जाओ।

सम्मान की अनोखी दास्तान

पद्मश्री मुहम्मद शरीफ़



समाजसेवी मुहम्मद शरीफ़ को निस्वार्थ सेवा के लिए पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उत्तर प्रदेश के अयोध्या के रहने वाले मुहम्मद शरीफ़ ने अपनी समाज सेवा से करोड़ों हिंदुस्तानियों का दिल जीत लिया। धर्म व जाति के भेदभाव के बग़ैर निस्वार्थ भाव से 25 हज़ार लाशों का अंतिम संस्कार करने वाले मुहम्मद शरीफ़ को भारत के राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद द्वारा पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया। शरीफ़ चाचा के नाम से मशहूर समाजसेवी मुहम्मद शरीफ़ को लावारिस लाशों के मसीहा के रूप में जाना जाता है। उन्होंने प्रतिदिन औसतन 2 से 3 लाशों का अंतिम संस्कार किया है। जिसके हिसाब से उन्होंने पिछले 25 वर्षों में 25 हज़ार से अधिक लावारिस शवों का अंतिम संस्कार किया है। उन्होंने केवल हिंदू या मुसलमान का नहीं बल्कि लगभग सभी धर्मों के लोगों का अंतिम संस्कार उनके धर्म के अनुसार किया।

मुहम्मद शरीफ़ द्वारा लावारिश शवों का अंतिम संस्कार करने के पीछे एक बहुत दुखद हादसा रहा है। वर्ष 1992 में उनके बड़े बेटे मुहम्मद रईस को 28 वर्ष की आयु में मौत के बाद रेलवे टै्क पर फेंक दिया गया था, जिससे उनके शव को अंतिम संस्कार तक नसीब नहीं हुआ था। जिसके बाद से उन्होंने लावारिश लाशों के अंतिम संस्कार को अपनी ज़िम्मेदारी मान लिया।

पद्मश्री तुलसी गौड़ा



इस वर्ष पद्मश्री सम्मान पाने वालों में एक बेहद लोकप्रिय नाम रहा कर्नाटक की आदिवासी महिला तुलसी गौड़ा का। गौड़ा पिछले छह दशक से पर्यावरण संरक्षण के लिए काम कर रही हैं। अब तक वे 30,000 से अधिक पौधे लगा चुकी हैं। अपने अनुभव और समझ के चलते तुलसी गौड़ा ने पर्यावरण के संरक्षण की दिशा में बहुत बड़ा योगदान दिया है। जंगलों में किसी एक तरह के पेड़ के बीच उनकी उत्पत्ति के लिए आवश्यक मदर ट्री की पहचान करने में तुलसी को महारत हासिल है। इसके अलावा उन्हें बीजों की गुणवत्ता पहचानने का भी काफ़ी अनुभव है।

अपना पूरा जीवन पेड़-पौधों को समर्पित करने वाली 72 वर्षीय तुलसी गौड़ा को पेड़-पौधों की गज़ब की जानकारी है। जिसकी वजह से उन्हें जंगल का इनसाइक्लोपीडिया भी कहा जाता है। तुलसी गौड़ा कर्नाटक के होनाली गांव की रहने वाली हैं, जो कभी स्कूल नहीं गईं। जब वे तीस साल की थीं, तभी पिता का देहांत हो गया था। गौड़ा बेहद सादगी भरा जीवन जीने के लिए जानी जाती हैं। वह राष्ट्रपति भवन में बिना चप्पल के नंगे पैर पद्मश्री सम्मान लेने आई थीं।

पद्मश्री हज़ब्बा



कर्नाटक में संतरे बेचकर आधुनिक स्कूल खोलने वाले हरेकला हज़ब्बा को राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद ने पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया। कर्नाटक के दक्षिण कन्नड़ा के न्यूपाड़ापू गांव में रहने वाले हरेकाला हज़ब्बा ने पैसे जोड़-जोड़कर एक स्कूल खोला है और वे हर हर साल अपनी बचत का पूरा हिस्सा स्कूल के विकास के लिए दान करते हैं।

65 वर्षीय हज़ब्बा अपने गांव में स्कूल न होने की वजह से पढ़ाई नहीं कर पाए थे। जिसके बाद उन्होंने अपना पूरा जीवन शिक्षा के लिए समर्पित कर दिया। हज़ब्बा अभी तक ख़ुद का घर नहीं बना सके हैं।

बुकर पुरस्कार-2021

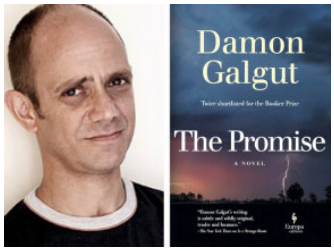

दक्षिण अफ्रीका के लेखक 'डेमन गलगुट' ने साल 2021 का बुकर पुरस्कार जीत लिया है। उन्हें यह पुरस्कार उनकी रचना 'द प्रॉमिस' के लिए मिला है। वे नादिन गॉर्डिमर (1974) और जेएम कोएत्ज़ी (1983 और 1999) के बाद इस पुरस्कार को जीतने वाले तीसरे दक्षिण अफ्रीकी लेखक हैं। उपन्यास का कथानक दक्षिण अफ्रीका के नस्लवादी इतिहास के साथ एक श्वेत परिवार के बारे में है। यह कहानी दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के संक्रमण में बड़े विषयों को दर्शाती है।

इससे पहले भी उन्हें 2003 में ''द गुड डॉक्टर''और 2010 में ''इन ए स्ट्रेंज रूम'' के लिए शॉर्ट लिस्ट किया गया था।

ग़रीबों का यह संकट

हाल में ही एसबीआई के इकोनॉमिक रिसर्च डिपार्टमेंट द्वारा जारी एक रिपोर्ट के अनुसार भारत की अनौपचारिक (इनफॉर्मल) अर्थव्यवस्था पिछले तीन वर्षों में 52 प्रतिशत से घटकर 15 से 20 प्रतिशत ही रह गई है। रिपोर्ट में इसके पीछे का कारण जीएसटी लागू करना, अर्थव्यवस्था का डिजिटलीकरण और विमुद्रीकरण को बताया गया है। ग़ौरतलब है कि इस क्षेत्र से देश के 93 प्रतिशत कामगार जुड़े हुए हैं, ज़ाहिर है इस संकुचन का असर प्रवासी मजदूरों, निर्माण-श्रमिक और कृषि-मज़दूर जैसे ग़रीब तबके पर पड़ा है।

अभिमत

बड़े देश अपनी भूमिका न भूलें

'बेसिक' (ब्राज़ील, साउथ अफ्रीका, भारत और चीन) की ओर से भारत ने चेतावनी दी है कि पर्यावरण बचाने के लिए हुआ ग्लासगो सम्मलेन अर्थहीन हो जाएगा, अगर विकसित देश नेट-जीरो के लक्ष्य के लिए विकासशील देशों की आर्थिक मदद नहीं करेंगे। पर्यावरण की बदतर स्थिति के पीछे विकसित देशों का विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन है। लिहाज़ा जब दुनिया पर ग्लोबल वार्मिंग से अस्तित्व का ख़तरा है तो उनकी नैतिक जिम्मेदारी है कि स्वच्छ ऊर्जा की जरूरतों के लिए वे विकासशील देशों की मदद करें। अस्तित्व का तत्काल संकट गरीबों पर ज्यादा पड़ रहा है। समुद्र के जल का तापमान बढ़ने और उसमें प्रदूषण के कारण ऑक्सीजन की कमी से आंध्र प्रदेश के समुद्र तट की मछलियों की करीब 20 मशहूर किस्में बंगाल की खाड़ी में सैकड़ों किलोमीटर दूर ठंडे पानी की तलाश में चली गई हैं। नतीजतन श्रीकाकुलम के 40% मछुआरे अपना घर-बार छोड़कर गुजरात व तमिलनाडु जैसे राज्यों के समुद्र तट पर बसने चले गए हैं।

बिहार और ओडिशा में धान के लहलहाते खेत अति-वृष्टि के शिकार हो गए क्योंकि एक महीने खेत से पानी रहने से धान की फसल सड़ गई। नासा की रिपोर्ट के अनुसार दुनिया में औद्योगीकरण के बाद 1880 से आज तक पर्यावरण तापमान 0.8 डिग्री सेल्सियस बढ़ चुका है। उधर आईसीएमआर का अध्ययन मानता है कि तापमान का एक डिग्री बढ़ना भारत में गेहूं और चावल उत्पादन में क्रमशः 7-10% व 4-6% गिरावट ला सकता है। लेकिन विकसित देश यह न भूलें कि तूफान, महामारी और अन्य प्राकृतिक आपदाएं बड़े देश को भी अस्तित्व के संकट में डालेंगी।

(सा. दैनिक भास्कर,13 नवम्बर 2021)

"तुममें
से कोई
मोमिन नहीं होता
जब तक कि वह अपने भाई
के लिए या यह कहा कि अपने
पड़ोसी के लिए वही कुछ पसन्द न
करे जो वह स्वयं अपने लिए
पसन्द करता है।"

(हदीस : मुस्लिम)

Nidan Health Care &

Research Centre



अपनी रचनात्मक क्षमता को निखारें महिलाएं

फ़ाइज़ा सईद

घरों में दैनिक कार्यों के साथ-साथ महिलाएं अपनी रचनात्मक क्षमताओं को इस्तेमाल करते हुए नित-नए आइडियाज़ पर काम कर सकती हैं। इससे एक ओर तो वे अपने समय को रचनात्मक कामों में लगाएंगी और दूसरी ओर उनमें से कुछ आइडियाज ऐसे हैं जो पैसे कमाने का साधन भी बन सकते हैं। आज इंटरनेट और सोशल मीडिया के दौर में कई वेबसाइटें और उन पर मौजूद लेख और वीडियो ऐसी औरतें का मार्गदर्शन कर रहे हैं जो घरों में रहकर रचनात्मक और लाभकारी काम करना चाहती हैं और कई आइडियाज पर काम करके ख़ुद को साबित करना चाहती हैं।



नए आइडियाज और किसी समस्या को हल करने की क्षमता ही अस्ल में आपको दूसरों से श्रेष्ठ बनाती है। जिस काम में आप ज़्यादा दिलचस्पी महसूस करें तो उसे पूरा करने की पूरी कोशिश करें, क्योंकि यही आपकी क्षमता का बेहतर इस्तेमाल है। सोच बिचार और मुश्किलों पर क़ाबू पाना ही आपके व्यक्तित्व को सबसे अलग बनाता है। जब आप जान लें कि आप के अन्दर रचनात्मकता है, तो फिर अपना सफ़र शुरू कर दें और पूरी लगन के साथ काम करें।

नए-नए विचारों पर ध्यान दें। तलाश करना और टटोलना ही किसी रचनात्मक दिमाग का काम है। अगर घर का माहौल सकारात्मक हो और आप अपने अनुभव के ज़रिये माहौल की समझ हासिल कर रही हों तो यही आपके अलग और क्षमतावान होने का सबूत है। इनसका सही इस्तेमाल कारामद हो सकता है। यह केवल निजी

ही नहीं बल्कि सामूहिक लाभ का कारण भी बन सकता है।

पुरानी चीज़ें को नए अंदाज़ में पेश करना या शिद्दत का इज़हार करना किसी के रचनात्मक होने का इशारा है। ऐसी महिलाएं अगर अपनी क्षमताओं को पहचान कर उनका सही इस्तेमाल करें, तो फ़ायदा उठा सकती हैं। आम लोग चीज़ों में सादगी और तरतीब को पसंद करते हैं। वे सवाल खड़े करने और किसी चीज़ में नयापन लाने और सोच-विचार से दूर भागते हैं। जब आप अपनी क्षमताओं को पहचान लें, तो उनकी जांच करने के लिए तैयार हो जाएं और कोई रास्ता ढूंढें।

सोचें कि क्या आसान है। किस तरह आप ख़ुद को साबित कर सकतीं हैं। अपनी दिलचस्पी और सहूलत पर ग़ौर करें। क्यों कि रचनात्मक दिमाग़ जब तक एक प्लेटफार्म पर काम न करे वह बिखराव का शिकार रहता है।

अगर आप आर्ट की शौक़ीन हैं, कला में दिलचस्पी रखती हैं तो इस से न केवल ख़ुद फ़ायदा उठाएं, बल्कि अगर आप इस में माहिर हो गई हैं तो दूसरों को भी सिखा सकती हैं और उन्हें भी रचनात्मक और सकारात्मक कामों में लगा सकती हैं। जो महिलाएं ऐसी किसी कला और रचनात्मक काम में दिलचस्पी रखती हैं, अपने घरेलू काम-काज के बाद कुछ समय निकाल कर आप पास की आर्ट एकेडमी जा सकती हैं, जहां आपको अपने शौक़ और क्षमताओं को निखारने का मौक़ा मिलेगा।

अगर आप फैशन और कपड़ों की डिजइनिंग का शौक़ रखती हैं तो उसे बेहतर अंदाज से अपनाएं और बाक़ायदा सीखें। हमारे यहां सिलाई सेंटर और फैशन डिजइनिंग सिखाने वाली संस्थाएं मौजूद हैं, जबकि औरतें किसी बुटीक का रुख़ भी कर सकती हैं, जहां मौजूद ड्रैसेज देखने से उनको फ़ायदा हो सकता है। कोशिश करें किसी तरह कुछ घंटे निकालें और अपनी व्यस्तता के साथ इस ओर भी ध्यान दें। यह न केवल नए फैशन और सिलाई कढ़ाई के नए अंदाज़ से जानकारी का कारण बनेगा, बल्कि आपकी क्षमताओं को बढ़ाने और इस काम में आपकी लगन और दिलचस्पी का कारण बनेगा।

कुछ महिलाएं घरों की सजावट के सामानों में रुचि रखती हैं। अगर आप उसे बाक़ायदा सीखें और छोटे पैमाने पर उसे कारोबार का रूप दें या उस फन में महारत हासिल करने के बाद दूसरों को सिखाने का सिलसिला शुरू करें, तो आर्थिक लाभ हो सकता है और साथ ही आप अपने घर को भी अलग अंदाज़ से सजाती रहेंगी। अगर केवल अपना शौक़ पूरा करने और घर की हद तक डेकोरेशन का सिलसिला जारी रखें, तो भी इसमें आपका फ़ायदा है। बच्चों के कमरों की सजाट पर भरपूर ध्यान दें। उन्हें अलग-अलग रंगों की चीज़ों से सजाएं और घर में तैयार की हुई चीजें से संवारें।

बच्चों को अलग-अलग रंगों के कार्ड बना कर दें, जिसमें वे दिलचस्पी लेने के साथ कुछ सीख भी सकें। इस तरह शुरू ही से बच्चों में आर्ट की समझ जगाई जा सकती है और वे उसे सीखने की ओर आकर्षित हो सकते हैं। फाइन आर्ट के नमूनों से अपने घर के कमरों को सजाना भी आपके शौक़ को दर्शाता है।

किचन में फलों और सब्ज़ियों की तस्वीरें तो सभी लगाते हैं। आप क्यों न कुछ अलग करें।अगर आप फाइन आर्ट में दिलचस्पी रखती हैं, तो ख़ुद कोई तस्वीर बनाएं जो किचन से संबंधित हो। किसी भी इस्तेमाल की हुई चीज़, जैसे प्लास्टिक की बोतल, मोम, लकड़ी वग़ैरा से भी आर्ट पीस बनाकर सजाया जा सकता है।

मसालों के डिब्बों को पेंट करके एक नया रूप दें। अलग-अलग रंगों से उन पर मसाले का नाम लिख दें। जहां यह किचन की सुंदरता को बढ़ाएगा, वहीं एक रचनात्मक काम भी है। यह आंखों को भला मालूम होगा और आपको अपनी क्षमताओं को निखारने का मौक़ा भी देगा। ड्राइंगरूम पर विशेष ध्यान दें, क्योंकि यह मेहमानों की बैठक है। अगर आप रचनात्मक क्षमताओं का प्रदर्शन करना जानती हैं, तो लकड़ी की अलमारियों पर अलग अंदाज़ से डिजाइनिंग की जा सकती है। गुलदान भी आपके हाथों की महारत से कमरे की सजाट में वृद्धि कर सकते हैं। अगर आप स्वाद और चटख़ारों के साथ नित नए पकवान तैयार कर सकती हैं, तो यह न केवल घर और ख़ानदान भर में आपकी वाह-वाही का कारण बन सकता है बल्कि यह रोज़गार का ज़रिया भी साबित हो सकता है।

अगर आप एक मां हैं, तो फिर अपने बच्चों का दिल जीत सकती हैं। उनके लिए अच्छे खाने बनाएं और बाहर के खानों की आदत ख़त्म करें जो उनके लिए हानिकारक साबित होते हैं। इस सिलसिले में ट्रेनिंग और वर्कशॉप्स से लाभ उठाएं। इंटरनेट से भी मदद ले सकती हैं। अगर आपने कोई नई डिश बना ली है और उसे दूसरों के सामने रखना चाहती हैं, तो कूकिंग सेंटर्स में होने वाले मुकाबलों में हिस्सा लें और उस लोगों के सामने पेश करें। अपनी रचनात्मक क्षमताओं को बढ़ाकर आप न केवल अपने घर, परिवार व समाज में ख़ुद को साबित कर सकती हैं बल्कि आर्थिक रूप से भी मज़बूती हासिल कर सकती हैं। ■■

रोशनी



डॉ. मुहम्मद
इक़बाल सिद्दीक़ी



क़ुरआनी दर्शन

“यह अल्लाह की किताब है, इसमें कोई संदेह नहीं। गार्गदर्शन है उन डरने वालों के लिए, जो ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान लाते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, जो रोज़ी हमने उनको दी है, उसमें से ख़र्च करते हैं, जो किताब तुमपर उतारी गई है (अर्थात् क़ुरआन) और जो किताबें तुमसे पहले उतारी गईं थीं उन सबपर ईमान लाते हैं, और परलोक (आख़िरत) में विश्वास रखते हैं। ऐसे लोग अपने रब की ओर से सीधे मार्ग पर हैं और वे ही सफ़लता प्राप्त करने वाले हैं।”

(क़ुरआन-2:1-7)

एक सवाल हमारे मन में पैदा होता है कि इस सृष्टि का स्रष्टा कौन है? क्या मनुष्य को किसी की उपासना या आराधना करनी चाहिए? क्या यह उसके लिए ज़रूरी है? क्या उसको किसी का आज्ञापालन करना चाहिए? अगर आज्ञापालन करना चाहिए तो किसका? जब हम मर जाएंगे, तो हमारा क्या होगा? क्या हम यूं ही मिट्टी में मिलकर रह जाएंगे ? या जला दिए जाएंगे तो राख़ बनकर उड़ जाएंगे? मरने के बाद क्या कोई जीवन है या केवल यही एक जीवन है? ये ऐसे सवाल हैं, जिनका जवाब हम अपनी इंद्रियों के माध्यम से पता नहीं लगा सकते।

यह परोक्ष की चीज़ें हैं, जिनका पता लगाने के लिए हमें ऐसे ज्ञान की

आवश्यकता है जो हमें हमारा रचयिता ही दे सकता है। इन पश्नों का उत्तर यदि हम नहीं पाते हैं तो फिर हम कल्पनाएं करने लगते हैं और अपनी कल्पनाओं से हम कुछ उपास्य बना लेते हैं। हम यह सोचने लगते हैं कि यह सृष्टि ऐसे बनी होगी वैसे बनी होगी या इसका बनाने वाला एक है या अनेक हैं और कभी-कभी हम अपने ज्ञान और अनुभव के आधार पर आकलन करने लगते हैं कि यह सृष्टि अपने आप बन गई होगी। ऐसा भी होता है कि हम सिरे से ही इन प्रश्नों को नकार देते हैं और पल्ला झाड़ लेते हैं कि इन प्रश्नों पर हमें सोचने कि ज़रूरत ही नहीं है।

वास्तविकता यह है कि इन प्रश्नों के उत्तर पर ही हमारा आचरण व व्यवहार निर्भर करता है। अगर हम इस बात पर विश्वास करते हैं कि इस सृष्टि का कोई बनाने वाला है, तो हमारा आचरण अलग होगा। अगर हम यह सोचते हैं कि यह सृष्टि अपने आप बन गई है, तो हमरा आचरण अलग होगा। अगर हम यह विश्वास करते है कि इस सृष्टि के रचयिता एक नहीं अनेक हैं, तो हमारा आचरण अलग होगा। हम अपने जैसे मनुष्यों और इस प्रकृति में पाई जाने वाली विभिन्न चीज़ो के साथ कैसा आचरण करते हैं, यह सब इसी पर निर्भर करेगा।

अब यहां क़ुरआन यह दावा करता है कि इसमें इस प्रश्न का उत्तर मौजूद है कि इस संसार को किसने बनाया। इसका रचयिता है या नहीं। क़ुरआन कहता है कि इसका रचयिता है और वह एक ही है। उसे हम विभिन्न नामों से पुकारते हैं। अरबी में उसका नाम अल्लाह है। इस किताब का दावा है कि यह मनुष्य का सच्चा मार्गदर्शन करने के लिए उसके पालनहार की ओर से भेजी गई है। यह किताब कहती है कि मार्गदर्शन के लिए कुछ योग्यताएं मनुष्य में होनी चाहिए।

पहली योग्यता है, ईश्वर का डर। अरबी में जिसको तक़वा कहा गया है, संयम, बुराई से बचने की इच्छाशक्ति, भलाई पर जमे रहने का संकल्प। दूसरी योग्यता है, परोक्ष पर बिना देखे विश्वास करना और जो कुछ ईश्वर के दूत ने बताया है उन सबपर बिना देखे विश्वास करना। तीसरी योग्यता है, नमाज़ क़ायम करना। नमाज़ क्या है? समर्पण और आज्ञापालन नमाज़ है। शारीरिक और मानसिक रूप से पूरी तरह समर्पित होकर ख़ुद को ईश्वर के समक्ष प्रस्तुत कर देना।

क़ुरआन यह दावा करता है कि इसमें इस प्रश्न का उत्तर मौजूद है कि इस संसार को किसने बनाया। इसका रचयिता है या नहीं। क़ुरआन कहता है कि इसका रचयिता है और वह एक ही है। उसे हम विभिन्न नामों से पुकारते हैं। अरबी में उसका नाम अल्लाह है। इस किताब का दावा है कि यह मनुष्य का सच्चा मार्गदर्शन करने के लिए उसके पालनहार की ओर से भेजी गई है। यह किताब कहती है कि मार्गदर्शन के लिए कुछ योग्यताएं मनुष्य में होनी चाहिए।

चौथी योग्यता यह है कि धन का लोभ त्यागकर उसे लोगों की भलाई पर ख़र्च करो। पांचवी योग्यता यह है कि ईश्वर की किताब यानी क़ुरआन पर विश्वास करो। इस बात पर विश्वास करो कि यह किताब ईश्वर की ओर से है और इसमें कोई संदेह नहीं है। वास्तव में जब आप इस किताब को पढ़ेंगे, तो आपको लगेगा कि इसमें एक भी बात ऐसी नहीं है, जिसमें कोई विरोधाभास हो।

छठी बात यह है कि मनुष्य मरने के बाद के जीवन यानी परलोक पर विश्वास करे। परलोक का यह विश्वास कुछ सत्यताओं का एक समूह है जैसे-मनुष्य इस संसार में उत्तरदायी बनाया गया है। संसार की पूरी व्यवस्था नाशवान है और एक दिन यह संसार नष्ट हो जाएगा। मनुष्य जब मर जाएगा, तो मरने के बाद उसे पुनः जीवित किया आएगा। उसके कर्मों का लेखा-जोखा ईश्वर के समक्ष प्रस्तुत होगा और उसी के आधार पर उसे स्वर्ग या नर्क यानी पुरस्कार या दंड दिया जाएगा। इस विश्वास को ही परलोक पर विश्वास करना कहा जाता है।

जिन लोगों में यह उक्त योग्यताएं हैं, वही लोग हैं जो वास्तव में सीधे एवं सच्चे मार्ग पर हैं और यही लोग हैं जो वास्तव में सफल होने वाले हैं। इस लोक में भी और मरने के बाद परलोक में भी। क़ुरआन में ईश्वर का कथन है-

''यह अल्लाह की किताब है, इसमें कोई संदेह नहीं। गार्गदर्शन है उन डरने वालों के लिए, जो ग़ैब (परोक्ष) पर ईमान लाते हैं, नमाज़ क़ायम करते हैं, जो रोज़ी हमने उनको दी है, उसमें से ख़र्च करते हैं, जो किताब तुमपर उतारी गई है (अर्थात् क़ुरआन) और जो किताबें तुमसे पहले उतारी गईं थीं उन सबपर ईमान लाते हैं, और परलोक (आख़िरत) में विश्वास रखते हैं। ऐसे लोग अपने रब की ओर से सीधे मार्ग पर हैं और वे ही सफ़लता प्राप्त करने वाले हैं।'' ■■

(क़ुरआन-2:1-7)

दृष्टिकोण



मलिक
मोअतसिम ख़ान

बोया पेड़ बबूल का तो.....?

हम जब भारतीय राष्ट्र, हिंदुस्तानी क़ौम या इंडियन नेशन कहते हैं, तो इसका तात्पर्य भारत में बसने वाले सभी वर्गों, पंथों और समुदायों से होता है। हमारे देश में सैकड़ों वर्ग, पंथ और समुदाय आबाद हैं। आज़ादी के बाद हमने देश में रहने वाले सभी लोगों के लिए स्वतंत्रता, भाईचारा, न्याय और समानता का सपना लेकर एक नई यात्रा की शुरुआत की, लेकिन भारतीय समाज के एक छोटे से समूह में जो सांप्रदायिकता, घृणा और संकीर्णता थी वह उसी प्रकार बाक़ी रही।

आज़ादी के बाद भारतीय मुस्लिम समाज बहुत-सी समस्याओं का शिकार रहा और वर्तमान समय में भी तमाम नफ़रतों, संकीर्णताओं और सांप्रदायिकताओं के बावजूद वह आत्मविश्वास और ताक़त के साथ इस देश में जिस हैसियत में खड़ा है वह दुनिया भर के इतिहास में एक अनोखी मिसाल है। सवाल यह कि वर्तमान समय की इन चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में एक इन्सान होने की हैसियत से, एक मुसलमान होने की हैसियत से और एक भारतीय होने की हैसियत से देश के प्रति उसकी क्या ज़िम्मेदारियां हैं?

हम देखते हैं कि नफ़रत, संकीर्णता और सांप्रदायिकता की सियासी लहर ने हमारे देश को अपनी चपेट में ले लिया है। वह चाहे ऊर्दू ज़ुबान का ख़ात्मा हो या अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी और जामिया मिल्लिया इस्लामिया के अल्पसंख्क चरित्र की बात हो, सुनियोजित सांप्रदायिक हिंसा की बात हो, मुस्लिम पर्सनल लॉ में हस्तक्षेप हो, ट्रिपल तलाक़ का मसला हो, बाबरी मस्जिद की शहादत हो, आतंकवाद के नाम पर फ़र्ज़ी एन्काउंटर हों, बेवजह गिरफ़्तारियां हों, इतिहास को तोड़-मरोड़ कर पेश करना हो, एनआरसी के नाम पर नागरिकता के अधिकार की बात हो, धर्म परिवर्तन के ख़िलाफ़ क़ानूनों की बात हो, भीड़ हिंसा की घटनाएं हो, गुजरात-2002 हो या असम के दंगे हों, किन-किन मामलों का उल्लेख किया जाए, विस्तार में जाना उचित नहीं है।

इन सबके बावजूद सहनशक्ति, संयम, संतुलन और टकराव से बचते हुए जिस तरह मुस्लिम समाज आज खड़ा है वह बहुत बड़ी बात है, लेकिन हमारे पूरे भारतीय समाज को यह सोचना चाहिए कि यह नफ़रत, यह घृणा, यह सांप्रदायिकता और संकीर्णता समाप्त होनी चाहिए। हमें और हमारे नेताओं

को समझना चाहिए कि इतिहास इस बात का गवाह है कि नफ़रत, संकीर्णता और संप्रदायिकत की लहर पूरे समाज को नुक़सान पहुंचा कर छोड़ती है। अगर इन्सान बबूल के बीज बोयेगा तो आम कहां से खाएगा?

जो समाज नफ़रत की बुनियाद पर खड़ा होगा उसका अंजाम भी बुरा होगा। बेशक हम जानते हैं कि मुसलमानों ने धैर्य व संयम का प्रदर्शन किया है, लेकिन इस नफ़रत और सांप्रदायिकता के नतीजे में अगर मुस्लिम समाजा धैर्य व संयम के रास्ते पर चलना छोड़ देगा तो यह देश अराजकता की स्थिति में आ जाएगा। मुस्लिम समाज उस रास्ते पर जाना नहीं चाहता। इसकी एक अहम वजह यह है कि मुस्लिम समाज इस देश को अपने पूर्वजों की निशानी समझता है और इस देश के भविष्य से उसका भाग्य जुड़ा हुआ है। इस देश को बनाने में और इसके भविष्य में उसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत का मुस्लिम समाज चाहता है कि इस देश का निर्माण समानता व न्याय की बुनियाद पर हो। वह इस देश में अपनी बड़ाई नहीं चाहता। इस्लाम इन्सानों पर इन्सानों की बड़ाई का समर्थक नहीं है। इस्लाम समानता और न्याय का झंडावाहक है।

हम और हमारे नेता यदि वास्तव में इस देश का बेहतर भविष्य चाहते हैं तो हमें भारतीय समाज की अवधारणा की सही समझ पैदा करनी होगी। भारतीय समाज से अभिप्राय हिंदू, मस्लिम, सिख, ईसाई आदिवासी और इसके अलावा यहां बसने वाले सभी समाजों से है। भारत में रहने वाले सभी लोग जब तक इस सही विचार को नहीं अपनाएंगे तब तक देश में नफ़रत, संकीर्णता और सांप्रदायिकता के इस माहौल को ख़त्म नहीं किया जा सकता।



हमें इन मायूसियों से भी बाहर आना चाहिए कि देश में उत्पीड़न व अत्याचार का जो सिलसिला जारी है, जो संकीर्णता एवं संप्रदायिकता जारी है, यह सिलसिला यूं ही बदस्तूर जारी रहेगा और इसका कोई अंजाम नहीं होगा, यह सोचना हमारी बहुत बड़ी भूल है। इसके बुरे अंजाम से बचने के लिए अभी हमारे पास समय है और मौक़ा भी है कि हम इससे वापस हो जाएं। जो नफ़रत, संकीर्णता और सांप्रदायिकता हमने इतिहास में देखी है और जिसके बुरे नतीजे हम आज तक भुगत रहे हैं, हमें उससे सबक़ सीखना चाहिए।

हमें बिगाड़ की बजाए बनाव की नीति को अपनाना होगा। भारतीय समाज विशेषकर मुस्लिम समाज को यह भली-भांति समझना होगा कि कमज़ोरों पर ज़ुल्म होता है, इसलिए कमज़ोरी का ख़ात्मा ज़रूरी है। इसके लिए उन्हें शिक्षा, योग्यता, ज्ञान-विज्ञान, कौशल और टेक्नोलॉजी के मैदान में आगे बढ़ना होगा। जो कुछ इस देश में जारी है, ऐसे माहौल में केवल मूकदर्शक बनकर और यह समझकर कि अल्लाह तआला की मदद आएगी, हाथ पर हाथ रखकर बैठने से अपने भविष्य को संवारा नहीं जा सकता।

अपने भविष्य को संवारने के लिए और इन हालात का मुक़ाबला करने के लिए शिक्षा का साथ ज़रूरी है। मुस्लिम समाज अपनी जिन विशेषताओं के साथ इस देश में मज़बूती से खड़ा है, उसे आत्मविश्वास व नैतिक बल के साथ और मज़बूती से आगे बढ़ना होगा।

हिम्मत, हौसला और बहादुरी के साथ उसे नफ़रत के जवाब में मुहब्बत और भाईचारे की राह पर जमे रहना होगा। अगर मुस्लिम समाज ईमान और यक़ीन की ताक़त के साथ इस्लाम के जीवन सिद्धांतों से सही तौर पर परिचित होकर उसे अपने जीवन में उतार ले तो, वह इस पूरे भारतीय समाज व यहां बसने वाले सभी इन्सानों की सच्ची सेवा कर सकता है और उनकी भलाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। ■■

आख़िरी पन्ना



नईम अलहिन्दी

सफलता की व्यापक अवधारणा

हममें से कौन है, जो रात दिन इन कोशिशों में न लगा रहता हो कि हमारा और हमारे परिवार का जीवन सफल हो जाए, इसके लिए लगभग हर व्यक्ति अपने जीवन में कुछ लक्ष्य निर्धारित करता है और जिसको प्राप्त करने के लिए वह एड़ी-चोटी का ज़ोर लगा देता है। उसे जब कामयाबी मिलती है तो वह अपनी इस कामयाबी पर ख़ुश होता है, लेकिन किसी वजह से यदि उसे अपने निर्धारित लक्ष्य तक पहुंचने में कामयाबी नहीं मिल पाती तो वह दुखी हो जाता है और अक्सर अपनी इस नाकामयाबी के लिए अपने भाग्य या ईश्वर को ज़िम्मेदार ठहरा देता है।

दरअस्ल, हम सभी ने अपनी सफलता का जो भी मापदंड निर्धारित किया है, उसका संबंध हमारे इस जीवन तक ही सीमित होकर रह गया है, जबकि हमारा जीवन हमारी मृत्यु के साथ ही समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि उसके बाद भी जारी रहता है। दुनिया के अधिकतर धर्मों के मानने वाले लोग मौत के बाद आने वाले जीवन में विश्वास रखते हैं। क़ुरआन के अनुसार, हमारा यह जीवन मृत्यु के साथ समाप्त नहीं हो जाता, बल्कि वास्तविक और कभी न ख़त्म होने वाला जीवन तो मरने के बाद से ही शुरू होता है।

हम देखते हैं कि आम तौर पर हमारी सारी कोशिशें इसी सांसारिक जीवन को ही सफल बनाने और शारीरिक सुख-सुविधाओं को हासिल करने तक ही सीमित रह जाती हैं। मृत्यु के पश्चात क्या होने वाला है, इस तरफ़ हमारा ध्यान कम ही जाता है। जबकि हमारा वास्तविक प्रयत्न अपने संपूर्ण जीवन को सफल बनाने का होना चाहिए। फिर यह बात भी किसी से छिपी नहीं है कि हर किसी की सफलता और असफलता का मापदंड भी अलग-अलग होता है। किसी के लिए धन-दौलत का महत्व अधिक है, तो किसी के लिए सत्ता का,



कोई व्यापारी बनना चाहता है, तो कोई अधिकारी, किसी के लिए एक सुखी पारिवारिक जीवन ही सफलता की कुंजी है, तो किसी के लिए स्वस्थ शरीर ही सब कुछ है। इसके साथ ही ज़्यादातर लोग किसी एक लक्ष्य तक ही सीमित नहीं रहते, बल्कि हर लक्ष्य की प्राप्ति के बाद वह दूसरा नया लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं और उनके सफल हो जाने पर अपने जीवन को सफल मानने लगते हैं, जबकि अपने पहले लक्ष्य से वे चूक जाते हैं।

यदि इन्सान ग़ौर करे तो उसे आसानी से यह बात समझ आ जाएगी कि इस संसार में वह ख़ुद नहीं आया, बल्कि उसे ईश्वर ने पैदा किया है। इन्सान के जीवन का मक़सद और उसकी कामयाबी का मापदंड क्या होना चाहिए, यह उस ईश्वर से बेहतर और कोई नहीं जानता। धर्म इन्सानों को इसी सत्य का ज्ञान देने का माध्यम है। इस संबंध में इस्लाम इस धरती के सभी इन्सानों का संपूर्ण मार्गदर्शन करता है। इसमें जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित मार्गदर्शन मौजूद है। इसमें वह सभी ज्ञान मौजूद है जो एक इन्सान को उसके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि दुनिया के अन्य धर्मों में इन्सानों के लिए जो मार्गदर्शन मौजूद था वह भी ईश्वर की ओर से आया था, लेकिन ईश्वर द्वारा अवतरित पिछली पुस्तकों के जो अवशेष आज उपलब्ध हैं, उन पर संदेह के पर्याप्त कारण मौजूद हैं, क्योंकि इनमें से कोई भी अपने वास्तविक रूप में मौजूद नहीं है। लोगों ने अपने हितों को ध्यान में रखते हुए ईश्वर की इन सच्ची शिक्षाओं को अपने अनुकूल बनाने के लिए उसमें बहुत अधिक काट-छांट की और अब उसकी वास्तविक शिक्षा विलुप्त होकर रह गई है।

शायद यही कारण है कि पवित्र क़ुरआन में ईश्वर का कथन है-

''रहा यह ज़िक्र, तो इसको हमने उतारा है और हम ख़ुद ही इसके रक्षक हैं।''

(क़ुरआन, 15:9)

क़ुरआन का एक चमत्कार यह भी है कि यह एकमात्र ऐसा ग्रंथ है, जोकि दुनिया में सबसे ज़्यादा लोगों को पूरा का पूरा शब्दशः कंठस्थ है और जिसे याद करना दुनिया के सारे ग्रंथों की तुलना में बहुत अधिक सरल है। छोटे-छोटे बच्चों को भी क़ुरआन ज़बानी याद हो जाता है। यह दुनिया के सभी इन्सानों के लिए अंतिम और सुरक्षित ईशग्रंथ है, जो इन्सानों को ईश्वर की वास्तविक और मूल शिक्षा से अवगत कराता है। क़ुरआन के अनुसार, मुक्ति का मार्ग बिल्कुल सीधा, साफ़, और स्पष्ट है।

यदि इन्सान ग़ौर करे तो उसे आसानी से यह बात समझ आ जाएगी कि इस संसार में वह ख़ुद नहीं आया, बल्कि उसे ईश्वर ने पैदा किया है। इन्सान के जीवन का मक़सद और उसकी कामयाबी का मापदंड क्या होना चाहिए, यह उस ईश्वर से बेहतर और कोई नहीं जानता। धर्म इन्सानों को इसी सत्य का ज्ञान देने का माध्यम है। इस संबंध में इस्लाम इस धरती के सभी इन्सानों का संपूर्ण मार्गदर्शन करता है।

क़ुरआन के कथन तर्कों की कसौटी पर भी खरे उतरने वाले हैं। बड़े से बड़े तर्कशास्त्री भी क़ुरआन के तर्कों के आगे लाजवाब हो गए हैं। क़ुरआन के अनुसार, मौत के बाद मिलने वाले जीवन में सफल होने के लिए न तो संसार को त्यागने की ज़रूरत है और न यहां की सुख-सुविधाओं को छोड़ने की ज़रूरत है, न ही अपने शरीर पर किसी प्रकार का कष्ट देना उचित है। ईश्वर ने क़ुरआन में व्यावहारिक, सीधे और सरल नियम निर्धारित किए हैं, जिसके आलोक में मार्गदर्शन प्राप्त कर इन्सान अपने इस जीवन और मौत के बाद हमेशा-हमेशा के लिए मिलने वाले जीवन को भी सफल बना सकता है।

क़ुरआन के अनुसार, ईश्वर भी इन्सानों से यही चाहता है कि वे उसके बताए हुए मार्ग पर चलकर दोनों लोकों में सफल हो जाएं। इसीलिए उसने इन्सानों के जीवन के संपूर्ण मार्गदर्शन के लिए क़ुरआन के रूप में एक पूरी जीवन प्रणाली अवतरित की है। ईश्वर सदैव से ही अपने ग्रंथों एवं ईशदूतों के माध्यम से विभिन्न भाषाओं और राष्ट्रों में इसी जीवन प्रणाली से इन्सानों को अवगत करता रहा है, जो उसने अपने अंतिम ग्रंथ क़ुरआन में बयान किया है। कोई भी इन्सान यदि स्वच्छ मन से क़ुरआन का अध्ययन करे तो, निश्चित रूप से उसे यह विश्वास हो जाएगा कि क़ुरआन ही सफलता का सीधा रास्ता बताने वाला और मानवता का सच्चा मार्गदर्शक है।■■

KANTI Monthly, New Delhi
DECEMBER 2021
Posted on 20-21 November 2021
Published on 18 November 2021
Posted Delhi RMS Delhi-110006

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2021-2023
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U(SE)-73/2021-2023
Total Pages with Cover: 52

